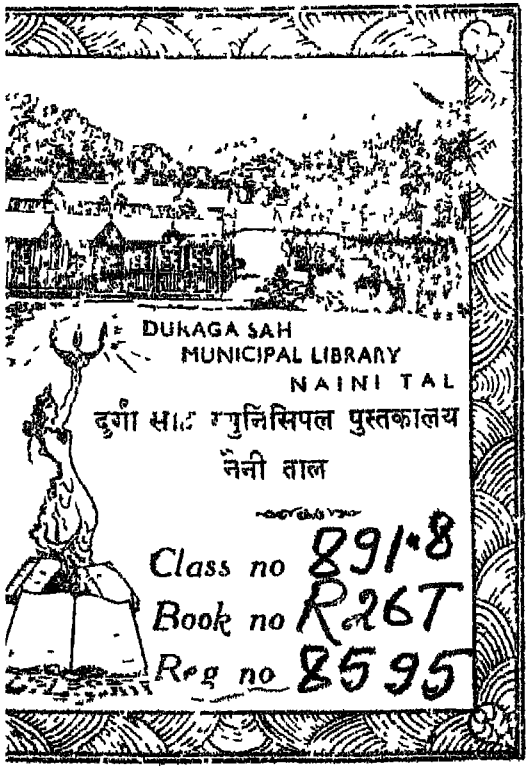

DUKAGA SAH
MUNICIPAL LIBRARY
NAINI TAL
दुर्गा साह म्युनिसिपल पुस्तकालय
नैनी ताल

Class no 891·8
Book no R26T
Reg no 8595

ठग

[ठगों पर आधारित एक मानवतावादी कहानी]

लेखक

रमणलाल वसन्तलाल देसाई

☆

अनुवादक

चंदुलाल परीख

एण्ड कंपनी, पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड,
राउंड बिल्डिंग, कालबादेवी रोड, बंबई २.

• प्रथम संस्करण
सितम्बर, १९६०

• मूल्य : २.००

• प्रकाशक :
के. के. वोरा,
वोरा एण्ड कम्पनी,
पब्लिशर्स, प्रा. लि.
३, राउण्ड बिल्डिंग,
कालबादेवी रोड,
बम्बई २.

• मुद्रक :
मुहम्मद शाकिर,
सहयोगी प्रेस,
१४१, मुट्ठीगंज,
इलाहाबाद ३.

प्रकाशकीय

अंग्रेजी शासन-काल के आरंभिक वर्षों में, हमारे देश के मध्यवर्ती भाग में, ठगों का एक व्यापक आन्दोलन उठ खड़ा हुआ था। प्रायः सभी विदेशी इतिहासकारों ने उस आन्दोलन को लुटेरों का, मानवता-विरोधी, नृशंस और हत्याकारी आन्दोलन कहा है। लेकिन अंग्रेज इतिहासकारों का यह वक्तव्य भारतीय जनता के स्वाधीनता संग्रामों को लांछित करने का हेतुपूर्वक किया हुआ दुष्प्रयत्न ही है। वस्तुतः ठगों के उपद्रव भारतीय जनता के स्वाधीनता आन्दोलनों के, तात्कालिक परिस्थितियों की विशेषता को लिये हुए, अभिनन्दनीय प्रयत्न थे। इतिहास और घटनाएँ इस बात की साक्षी हैं कि ठग निरे लुटेरे और हत्यारे ही नहीं थे; उनका संगठन लूट मार करनेवाले डाकुओं का गिरोह ही नहीं था। ठगों की चारित्रिक मर्यादा बहुत उच्चकोटि की होती थी। विदेशी शासकों के अत्याचारों को मिटाने का व्रत लेकर ही ठग ठग-संगठन का सदस्य बनता था। साहस, निडरता और देश भक्ति ठग का अनिवार्य गुण होता था। धनिकों के शोषण को मिटाने के लिए ठग कृत संकल्प रहता था। नारियों का वह पूरा-पूरा आदर करता था। अनुशासन ठगों का सैनिकों से भी कठोर होता था! देसाईजी ने ठगों से सम्बन्धित इन्हीं सब तथ्यों को अपने इस लघु उपन्यास में उद्घाटित किया है। कथानक के उपयुक्त रोमांचकता और कुतूहल की प्रचुरता भी इस कहानी में है। किशोर पाठकों का मनोरंजन और ज्ञानवर्द्धन करने के साथ-ही-साथ यह कृति उनमें साहस, वीरता और देशभक्ति के भावों को जागृत करेगी।

सूची

१	फाँसी का अनुभव	९
२	ठग मेरे तम्बू में	१५
३	व्याकुलता और पराजय	२०
४	प्रेम की गूँज	२५
५	तहखाने में गोरी-काली ठगी	३०
६	गुप्त स्थान में मेरी परीक्षा	३५
७	भग्न-हृदय	४५
८	छल-कपट	५३
९	आजाद की सोहबत में	६०
१०	संघ लूटा गया	६७
११	जादू के खेल	७३
१२	खोये हुए हार का पता	८२
१३	विचित्र अनुभव	८७
१४	बलिदान की तैयारी	९३
१५	ठग संगठन की आखिरी साँस	१०२
१६	ठगों का हृदय	१०९
१७	मानवी कविता	११६
१८	ठग और मानवता	१२२

१ : फाँसी का अनुभव

इस जंगल में पड़ाव डाले करीब छः महीने हो गए थे। ठग लोगों के आखरी भयंकर अत्याचार के बाद हमने अपनी छावनी इसी जंगल में रखी थी, और इससे हम ठगों की गतिविधि पर काफी नियंत्रण रख सके थे। अब हम लोग करीब-करीब भयमुक्त हो गए थे।

इंग्लैण्ड में पैदा होनेवाले गोरों को भारत के जाड़े का मौसम अधिक माफिक आता है। खास करके आज सुबह ज्यादा ठंडक थी; और दूसरा कुछ काम न होने से, जलपान के बाद, शिकार खेलने की योजना बनाई गई। पाँच-छः साथियों को लेकर, हरबो-हथियार से लैस, झाड़ी से घिरी हुई पास की पहाड़ी की ओर हम तेजी से बढ़ चले। ठग लोगों का पीछा करते-करते इस प्रदेश से हम पूरी तरह परिचित हो गए थे। सूर्य सिर पर आ चुका था, फिर भी आज कोई शिकार हाथ न लगा।

झाड़ी अब घनी होती जा रही थी अतएव स्वाभाविक रूप से ही हम एक-दूसरे से अलग होते गए और टेढ़ी-मेढ़ी, ऊँची-नीची पहाड़ियों में स्वच्छन्दता से घूमने लगे। मैं खूब भटका। सूर्यास्त हो रहा था। मैं निराश होकर एक बड़े पत्थर की ओट में लेट गया। सारा दिन भटकते रहने के कारण इतना अधिक थक गया था कि पत्थर की छाया में, ठंडी हवा लगते ही, मुझे नींद आ गई।

मैं कब तक सोता रहा इसका मुझे कोई खयाल नहीं। सहसा मानसिक भय के साथ मैं जाग पड़ा और देखता क्या हूँ कि लगभग पन्द्रह हाथ की दूरी पर, झाड़ी के अन्दर से दो चिनगारियाँ-सी चमक

रही थीं। कम-से-कम कोई शिकारी तो इस चिनगारी को पहचानने में भूल नहीं कर सकता।

शेर इतने पास था कि एक छलाँग में ही वह मेरा काम तमाम कर देता।

शेर ने अपनी पूँछ हिलाई। वह झपटने की तैयारी में ही था। मेरे हृदय की धड़कन तीव्र हो गई, मैं भयभीत हो गया और मारे डर के अपनी सुध-बुध ही बिसर गया।

एकाएक किसी की पुकार सुनाई पड़ी, 'राजुल, बस।' पुकारने की प्रतिध्वनि शान्त होने के पहले ही शेर मुड़ा और अदृश्य भी हो गया।

मैं किसी तरह खड़ा हुआ और तभी एक युवक ने मेरे पास आकर कहा—साहब, मत घबराइए। यह तो मेरा पालतू शेर है। शिकार के पीछे आप बहुत दूर निकल आये हैं।

उसकी आवाज मुझे बड़ी मधुर मालूम पड़ी। अंग्रेज शेर से घबराते हैं, ऐसा असर उस पर होने देना मैंने मुनासिब नहीं समझा। मैंने कहा—अच्छा हुआ कि आपने बाघ को बुला लिया। मैं यह छुरा निकालने को ही था। आपका शेर बच गया।

शेर के मालिक पर मेरी शेखी का असर हुआ या नहीं यह मैं न जान सका। वह मुस्कराते हुए मेरे पास आकर बैठ गया। उसकी उम्र चौबीस-पच्चीस साल से अधिक नहीं लगती थी। उसका चेहरा सुन्दर, कोमल और शरीर सुदृढ़ था। मुझे आश्चर्य तो इस बात का था कि इस लड़के को यह पता कैसे चला कि मैं शिकार के पीछे ही इतनी दूर चला आया हूँ।

मेरे पूछने पर उसने सरलता से उत्तर दिया—साहब, मैं आपको अच्छी तरह पहचानता हूँ। कर्नल स्लिमान को भला कौन नहीं पहचानेगा! ठगों को नष्ट करने का काम सरकार ने आपको सौंपा है। सारा भारत आपको जानता है तो....क्या मैं ही नहीं पहचानूँगा?

ऐसे भयानक एकान्त स्थल में, मुझे नाम और ओहदे के साथ पहचाननेवाला क्या कोई ठग ही मेरे सामने खड़ा था? शेर से भी

भयानक हँसीवाले और फाँसी के लिए गले में रेशमी रूमाल डालनेवाले ठग की मूर्ति मेरे सामने खड़ी हो गई। मैं नितान्त अकेला था। मेरे हृदय की धड़कन तेज हो गई।

'अब तो अँधेरा होने आया। आपका पड़ाव यहाँ से बहुत दूर है। इस समय आप लौटकर जा भी नहीं सकेंगे। तो आज की रात मेरे ही साथ क्यों न बिताइए ?' उसने कहा।

मैंने कई बहाने बनाये। यात्रियों में विश्वास पैदा करके और स्नेह-भरी वाणी से आमंत्रण देकर मौत के घाट उतारनेवाले ठग नेताओं से मैं अपरिचित न था।

मेरे बहाने सुनकर युवक के मुँह पर फिर हँसी छा गई। उसने कहा—स्लिमान साहब, मैं रात को ही आपको आपके पड़ाव पर पहुँचा आता, मगर आज कई कारणों से आपका साथ नहीं दे सकता। परन्तु मैं अपनी तलवार की कसम खाकर कहता हूँ कि आपका बाल भी बाँका न होगा।

यह कहकर उसने ताली बजाई। ताली की आवाज़ के साथ पहाड़ियों के पीछे से, अचानक चार आदमी निकल आए और हमारे सामने अदब के साथ खड़े हो गए। युवक ने आज्ञा दी—साहब को अपने मठ में ले जाओ। मैं भी अभी आता हूँ। और देखना, साहब को कोई तकलीफ न हो।

मुझे हुक्म बजाने की आदत नहीं थी, फिर भी कुछ असन्तोष के साथ उस युवक की आज्ञा का मैंने पालन किया। ये लोग मुझे रास्ता दिखाते हुए ले चले।

ये लोग कौन हैं—इस विचार में तल्लीन, मैं अपने मार्गदर्शकों के साथ रास्ता तय करने लगा। छोटी-मोटी पहाड़ियों को पार करते हुए, कुछ समय बाद, एक घनी पहाड़ी की विशाल तराई में हम आ पहुँचे।

इस तराई के बीच में एक छोटा-सा किला था। उस किले के दरवाजे खुले हुए थे। एक पहरेदार इधर-उधर घूम रहा था। उसने अपने पास का लालटेन ऊँचा किया, हमें देखा और अन्दर जाने दिया।

किले की दीवार से सटे हुए उस विशाल भवन में हम दाखिल हुए। मकान के सहन को पार करके एक बड़े कमरे में हमने प्रवेश किया। वहाँ एक चौकी बिछी हुई थी। मुझे उस पर बिठाकर चारों आदमी अदृश्य हो गए।

कमरे की सुन्दर सजावट को देखकर मैं दंग रह गया। सोचने लगा कि ऐसी पहाड़ी पर, आबादी से इतनी दूर, इतना वैभव जमा किसने किया है? दीवार पर कई प्रकार के हथियार और बख्तर लटक रहे थे। खूँटियों पर गेरुए कपड़े लटकते देख मेरे आश्चर्य का पार न रहा।

एकाएक अन्दर से किवाड़ खुला और उसमें से निकलकर एक साधु मेरे पास आया। उसके पीछे दो आदमी थालियाँ लेकर आ रहे थे। बड़े इत्मीनान से उसने मेरी ओर देखा। मेरा संशय बढ़ने के पहले ही उसने मुझसे कहा—साहब, फल और कन्द-मूल ही हम साधु लोगों की खुराक है। आप आराम से भोजन कीजिए और तत्पश्चात् विश्राम।

मैंने उसका आभार मानते हुए पूछा—मैं किसका मेहमान हूँ?

हँसते-हँसते उसने उत्तर दिया—आप मेरे मेहमान हैं। यह हमारा मठ है। और भगवान की कृपा से हम भूले-भटके यात्रियों का स्वागत-सत्कार कर सकते हैं। इससे अधिक जानने की इच्छा आप न कीजिए। भोजन करके आप यहीं सो जाइए।

इतना कहकर उसने हाथ ऊँचा किया, मानो मुझे आशीर्वाद दे रहा हो। फिर वह वापस चला गया। मैंने भरपेट भोजन किया; फिर बिछे हुए एक बड़े पलंग पर लेट गया और मुलायम रेशमी रजाई ओढ़कर नींद को मनाने लगा।

एकाध क्षण मैं जागता हुआ पड़ा रहा। इतने में कुछ खड़खड़ाहट हुई। जिस दरवाजे से मैं इस कमरे में आया था उस दरवाजे को खुलते देखकर मैं चौंक पड़ा। दीये के धुँधले प्रकाश में मैंने देखा तो एक युवक कमरे में खड़ा था।

वह कमरे में घूमने लगा। जब वह मेरे पलंग के पास आया तो मैंने आँखें मूँद लीं और सोने का ढोंग किया। ठग लोग गलफाँस

डालने के पहले अपने शिकार को जाग्रत करते थे, यह मैं जानता था। फौरन ही दूसरा दरवाजा खुला और शेर से बचानेवाले युवक को मैंने अपने सामने खड़ा पाया। कुछ बोलने के पहले उसने मेरे पलंग की ओर दृष्टि डाली और पहले आये हुए युवक से कहा—अन्दर आइए।

अन्दर की ओर जाते-जाते वह युवक पूछ रहा था—यह गोरा कौन है? इसे कब पकड़ा?

और फिर तत्काल ही दरवाजा बन्द हो गया। मुझे विश्वास हो गया कि मैं भवानी के आगे बलि चढ़ाने के ही लिए लाया गया हूँ। ठग लोगों की जड़ नष्ट करनेवाला, मैं जीवन की अन्तिम घड़ियों का अनुभव करने लगा मुझे अपने सामने मौत नाचती दिखाई दे रही थी।

मुझे यह दृढ़ विश्वास हो गया कि यह मकान साधु का आश्रम नहीं वरन् किसी बड़े षड्यन्त्र का अड्डा है। मैं जिन आदमियों के बीच में था वे कोई सीधे-सादे साधु या सद्गृहस्थ नहीं, जबर्दस्त षड्यन्त्रों के सूत्रधार थे।

निस्तेज दीये को अब मैंने बिलकुल बुझा दिया। अँधेरे में मैंने दरवाजा खोलने का प्रयत्न शुरू किया। दरवाजे की चौखट पर, चारों ओर, मैं यन्त्र की भाँति अपना हाथ घुमाने लगा। छोटी-सी एक कील का अग्रभाग मेरे हाथ में आया। उसे दाहिनी ओर खींचने पर एक छोटी-सी खिड़की मेरे हाथ लग गई।

यह छोटी खिड़की एक बड़े आँगन में खुलती थी और उस आँगन से आगे बड़ा दालान दिखाई देता था। मुझे कोई देख नहीं सकता था। अत्यन्त कष्ट होते हुए भी मैं खिड़की पकड़कर अधर लटका रहा और सामने जो दृश्य देखा उससे मेरे आश्चर्य का पार न रहा।

एक अँग्रेज कन्या के सामने वे दोनो युवक बैठे हुए थे। क्या वह कप्तान प्लेफर की पुत्री तो नहीं थी, जिसे ठग लोग उठा ले गए थे? क्या अब तक वह जिन्दा थी? ठग लोगों का यह आखिरी अत्याचार था, और कप्तान प्लेफर के तम्बू में से ही उसकी बेटी के गुम होने से बड़ा हाहाकार मच गया था। अपने पूर्ववर्ती अधिकारी की बेटी को

जीवित खोज निकालने का यश क्या मुझे मिलेगा ? तभी, जो युवक शेर का मालिक था उसकी बात ने मेरा ध्यान आकर्षित किया। वह दूसरे युवक को सम्बोधित कर कह रहा था—अब तो आपको विश्वास हुआ न ?

'विश्वास हो या न हो, पर आपके आगे उसे लौटाने के सिवा और कोई चारा नहीं है।' नये युवक ने कहा।

'कोई मुझे जबर्दस्ती मजबूर नहीं कर सकता। किसी की मजाल नहीं कि मेम साहिबा की मर्जी के खिलाफ उनको मेरे पास से हटा सके।' युवक ने जवाब दिया।

'जानते हैं, यह आप किससे कह रहे हैं ?'

'मुझे परवाह नहीं है; जिसे सुनना हो सुने।' मेरे परिचित युवक ने कहा।

गौरांगना का आदर होता है और उसका मन रखा जाता है, यह देखकर मुझे सन्तोष हुआ। मैं अपने हाथ के दर्द को भूलकर एकाग्रचित्त सुन रहा था कि सहसा कोई मेरी टाँगों को पकड़कर नीचे खींचने लगा। मेरे हाथ से खिड़की छूट गई और मैं नीचे गिर पड़ा। अब मैं किसी भी भयंकर परिणाम के लिए तैयार था। मेरे खड़े होने के पहिले ही दो तगड़े मनुष्यों ने मुझे नीचे पटक दिया। मुझे अपने दोनो पैरों पर भारी वजन का अहसास हुआ। ठग लोग अपने शिकार को बड़ी फुर्ती से नीचे डालकर उसके पैरों पर भारी बोझ रखकर गला घोंट देते हैं, ऐसे वर्णन मैंने बहुत सुने थे। कुछ स्वस्थ होने के पहले ही मेरे गले के आस-पास एक लम्बा, चिकना कपड़ा लिपट गया और मेरे होश-हवास उड़ गए। फौरन समझ गया कि मैं जल्लादों के पंजों में फँस गया हूँ। मैंने जीने की आशा ही छोड़ दी। मेरे गले में लपेटे हुए रूमाल में से जहरीली पर मधुर सुगन्ध आ रही थी। मैं मृत्यु के किनारे खड़ा था। मेरा गला सूखने लगा। गले में फन्दा पड़ते ही मैं बेहोश हो गया। या मर तो नहीं गया था ?

२ : ठग मेरे तम्बू में

मुझे बहुत ठंड लग रही थी। मैं एकदम खड़ा हो गया। मालूम हुआ कि अपनी छावनी से दो फर्लांग से अधिक दूर नहीं हूँ। अब कुछ अधिक हिम्मत के साथ मैं वहाँ से आगे चल पड़ा।

पहरेवालों के तम्बू के समीप पहुँचते ही उन्होंने मुझे पहचान लिया। मेरी अनुपस्थिति से छावनी में घबराहट फैल गई थी। सारी रात लोग मुझे खोजते रहे थे। मैं अपने तम्बू में गया। मेरे साथ शिकार खेलने आये हुए अन्य अधिकारियों ने आकर आनन्द व्यक्त किया।

मेरी ओर ताकते हुए, किसी ने कहा—किसी ठग के साथ हाथा-पाई हुई है शायद।

'आपको कैसे मालूम हुआ ?' मैंने पूछा।

'आपके गले में ठगों का रूमाल लिपटा हुआ है।'

झूठी हँसी के साथ स्वीकृति-सूचक सिर हिलाते हुए मैं फिर चौंक पड़ा। मुझे अब तक मालूम नहीं था कि रातवाला रेशमी रूमाल अभी तक मेरे गले में ही लिपटा था।

दिन के काम यंत्रवत् होते रहे। हमेशा की तरह ठगों की तलाश में भेजी हुई टोलियाँ चारों ओर घूम आईं। इतने में जाड़े का दिन पूरा हुआ और रात घिरने लगी।

अपने विश्वसनीय पाँच सैनिकों को तैयार होने का मैंने आदेश दिया। मैं भी हथियार बाँधकर तैयार हो गया।

रात बढ़ रही थी। राह देखते-देखते मैं थक गया। एकाएक दूर सियार की आवाज सुनाई पड़ी। मैं सावधान हो गया। तम्बू के दरवाजे की ओर दृष्टि डाली तो उसकी राह एक आकृति मेरी ओर बढ़ रही थी। मैं बड़बड़ा उठा, 'क्या सब चौकीदार मर गए ? मैंने कहा तो था कि बिना हुक्म के किसी को अन्दर मत आने देना।' मगर मेरे इस कथन को उस आकृति ने या तो सुना नहीं या फिर सुनने पर भी उसने कोई परवाह नहीं की।

वास्तव में वह आकृति उस शेरवाले युवक की ही थी। हँसते-हँसते वह मेरे पास आया। मैंने भी अनमने भाव से उसका स्वागत कर सामने की कुर्सी पर बैठने का संकेत किया। दरवाजे पर खड़े हुए सन्तरियों के प्रति अपनी नाराज़गी को मैं छिपा न सका। मैंने युवक से पूछा—क्या कोई बाहर नहीं था ? आपके आने का समाचार भी मुझे किसी ने नहीं दिया।

'इसमें उनका कोई दोष नहीं।' युवक ने कहा, 'इधर से करीब पचास कदम की दूरी पर आग की लपटों को देखकर सब उधर दौड़ गए और मैं अन्दर चला आया।'

'लपटें ? तो क्या आग लगी है ? फिर तो मुझे भी छान-बीन करनी चाहिए।' मैंने आतुर होकर कहा।

'नहीं-नहीं, साहब ! सबको चौंकाने और यहाँ से दूर हटाने के लिए मैंने ही वे राल की लपटें उत्पन्न की थीं। आपको चिन्ता करने का कोई कारण नहीं है।' युवक ने उसी तरह मुस्कराते हुए कहा।

'आपने मुझे भी चौंकाने का तय किया है क्या ? क्या कल रात को आपने कुछ कम चौंकाया है ?' मैंने कहा।

'मुझे बड़ा अफसोस है। ऐसा करने की मेरी तनिक भी इच्छा नहीं थी। मगर आपकी जिज्ञासा हद से ज्यादा बढ़ गई थी।' उसने उत्तर दिया।

'मगर आश्चर्य तो यह है कि आपने मुझे मार क्यों न डाला ?' मैंने सवाल किया।

उसने उत्तर देते हुए कहा—हम आपको कैसे मार सकते थे ? आप तो हमारे मेहमान थे।

'पर आप यह तो जानते ही हैं कि मैं आपका पक्का दुश्मन हूँ।' मैंने जोर देते हुए कहा।

उसने हँसते-हँसते कहा—क्या आपने मुझे ठग मान ही लिया ?

मैंने कहा—यदि आप ठग नहीं तो कौन हैं ? कौन हैं, क्या हैं, यह जब तक नहीं बतायेंगे मैं तो आपको ठग ही मानता रहूँगा।

वह थोड़ा गम्भीर होकर बोला—ठीक ही तो है। दुनिया में कौन आदमी ठग नहीं है? हमारे पंडित लोग तो कहते हैं कि ईश्वर जिस शक्ति से इस दुनिया का निर्माण करता है वह शक्ति, वह माया भी ठगिनी ही है।

'देखिए अगर आप सच-सच बता देंगे कि आप ठग हैं तो मैं आपको बचा सकूँगा....और....और जागीर....वगैरह दिलवाने के लिए सरकार से सिफारिश भी करूँगा।' मैंने उसको लालच दिया।

उसने कुछ खीझे हुए स्वर में कहा—क्या आप मुझे भी टोंक का नवाब बनायेंगे?

ठगों के एक सरदार को जागीर देकर हमने मिला लिया था, और यह घटना अभी ताजा ही थी।

कुछ रुककर उसने पुनः कहा—अगर मैंने अस्वीकार किया, तो?

तुरन्त मैंने कमर से पैना छुरा निकाला और फुर्ती से कूदकर उसकी कुर्सी के पास, उसकी छाती के सामने छुरा तानकर खड़ा हो गया।

छाती के सामने छुरा तना होने पर भी उस पर कोई असर क्यों नहीं हुआ, इसके बारे में मैं अभी सोच ही रहा था कि उसने कुछ गम्भीरता से कहा—जरा पीछे मुड़कर तो देखिए कि मुझे मारने से आपके क्या हाल होंगे?

मैंने जैसे ही दृष्टि पीछे की ओर डाली तो अपने हाथ पर बिजली की गति और वज्र के भार का अनुभव किया। कुर्सी पर बैठे-बैठे ही उस युवक ने मेरे हाथ को मजबूती से पकड़ लिया था। मुझे खयाल तक न था कि वह इतना बलवान होगा! मेरे हाथ की पकड़ ढीली पड़ गई और छुरा नीचे गिर गया। मैं छुरा लेने को झुका। उसी समय युवक ने मेरा हाथ छोड़ दिया। मेरा डर चला गया और तम्बू के दरवाजे की ओर जाने को मैंने एक कदम बढ़ाया; तभी एक भयानक शेर मेरे पीछे आ खड़ा हुआ। यह देख मैं डर से काँपने लगा। फिर मुझे याद आया कि कल भी ऐसा ही एक शेर उस युवक के कहने पर चला गया था। अन्त में न जाने क्यों मैं अपनी कुर्सी पर बैठ गया।

यह स्पष्ट दीख रहा था कि युवक मेरी इस असहाय स्थिति से लाभ उठाना नहीं चाहता।

उसने कहा—साहब, मैं कौन हूँ, यह आप समय आने पर स्वयं ही जान जायेंगे। तब तक आप विश्वास रखिए कि मैं आपका दुश्मन नहीं, मित्र हूँ।

'क्या मुझे ठगों को अपना मित्र समझना होगा ?' मैंने कहा।

'आप यह क्यों मानते हैं कि मैं ठग हूँ ?' उसने सवाल किया।

'आप ठग नहीं हैं, इस बात का सबूत दे सकते हैं ?' मैंने पूछा।

'मैं ठग हूँ या नहीं इस झंझट में आप क्यों पड़ते हैं ? केवल इतना विश्वास कीजिए कि मैं आपका मित्र हूँ और आपको एक सलाह देने आया हूँ।' यह कहकर उसने चुटकी बजाई और मेरे पीछे गुर्राता हुआ वह भयानक शेर चुपचाप आगे आया और युवक के पैरों के पास बैठ गया।

नीचे बैठे हुए वनराज के ऊपर हाथ फेरते हुए युवक को मैं भौंचक देखता रहा। यद्यपि शेर का भय अभी तक मेरे मन से बिलकुल दूर नहीं हुआ था, फिर भी मैंने पूछा—आप क्या सलाह देना चाहते हैं ?

'आपको अपनी छावनी यहाँ से उठा लेनी चाहिए।' उसने कहा।

'क्यों ?' मैंने पूछा, 'मेरे इधर आने से ठग लोगों का उपद्रव कुछ कम हुआ है।

'क्या आप ऐसा मानते हैं कि ठग लोग एक ही स्थान पर रहते हैं ? मैं सिर्फ यह कहना चाहता हूँ कि आप इस भ्रम में न रहिए। यह कहना मुश्किल है कि ठगों की जमात हिन्दुस्तान के कौन-से प्रदेश में नहीं है ? मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि इस देश के गाँव-गाँव में ठग बसे हुए हैं। इनके अलावा आपकी छावनी में भी मैं ठग लोगों को बता सकता हूँ। हो सकता है कि आपके अंगरक्षकों में भी ठग निकल आयें। और क्या आप विश्वास दिला सकते हैं कि भविष्य में आप खुद ठग लोगों के सहायक नहीं हो जायेंगे ?'

उसकी यह बात चौंकानेवाली थी।

'क्या आपको मेरे बारे में भी शंका है ?' मैंने पूछा।

'आपसे बड़े लोगों पर भी शंका की जा सकती है।'

इतना कहते हुए उसने अपने अँगरखे की जेब में से चमकती हुई कोई चीज निकाली और अपनी हथेली में रखकर मुझे दिखाते हुए बोला—कहिए साहब, क्या आप इस चीज को पहचान सकते हैं ?

छोटे नीबू-जैसे चमकते हुए उस सुन्दर 'चन्द्रिका' नाम के हीरे को मैं तुरन्त पहचान गया और चिल्ला उठा—अरे, आला अफसर हुजूर की मेम साहिबा का चोरी गया हुआ यह हीरा आपके पास कैसे ?

'बड़े अफसर साहिब की मेम साहिबा के पास यह हीरा कैसे आया—क्या आप यह जानते हैं ?' मुझसे उसने पूछा।

मैंने कहा—हाँ-हाँ, खूब जानता हूँ। खुद बेगम साहिबा ने यह हीरा मेम साहिबा को भेंट में दिया था।

'बेगम साहिबा के दिल में मेम साहिबा के प्रति इतना प्रेम क्यों उमड़ आया कि उन्होंने यह कीमती हीरा उन्हें भेंट कर दिया ?' उसने पूछा।

मैं उसके इस प्रश्न का अभिप्राय समझ गया। बेगम साहिबा का बेटा उनका असली बेटा नहीं है, यह अफवाह उड़ाई गई तो सरकार की ओर से मामले की छान-बीन शुरू हुई। पक्ष और विपक्ष, दोनों ओर से पैसा पानी की तरह बहाया गया। बेगम साहिबा को अपना पक्ष कमजोर होता दिखाई दिया तो उन्होंने तरकीब से काम लेने का फैसला किया। आला अफसर की मेम को अपना मेहमान बनाया। जब मेम उनसे मिलने आई तो यह बेशकीमत हीरा उसे भेंट में दिया गया, ताकि वह बेगम साहिबा के पक्ष का समर्थन करे और उनके बेटे की गादी बरकरार रह सके।

लेकिन बदकिस्मती से जिस दिन मेम को हीरा दिया गया उसी दिन सरकार की ओर से फैसला हो गया कि गादीनशीन बेटा बेगम साहिबा का असली बेटा नहीं है, इसलिए उनकी रियासत को खालसा कर दिया जाये।

ऐसी हालत में भेंट किया हुआ हीरा वापस हो जाना चाहिए था, और मेम ने ईमानदारी से उसे लौटाने का बन्दोबस्त कर भी दिया था। अपने निजी सचिव (प्राइवेट सेक्रेटरी) को बुलाकर लौटाने का हुक्म भी दे दिया। सचिव ने भी सुरक्षा की दृष्टि से उस हीरे को खजाने में जमा कर दिया था। लेकिन उस रात खजाने के चौकीदार का किसी ठग ने गला घोंटकर वध कर डाला और इस प्रसिद्ध 'चंद्रिका' हीरे को कोई चुरा ले गया। यह सारी बात जगजाहिर हो चुकी थी। मैंने सारा किस्सा उस युवक को सुनाया। पर मुझे आश्चर्य हो रहा था कि उस युवक के पास यह हीरा कैसे पहुँच गया; और मैंने अपना यह विस्मय उस पर प्रकट भी कर दिया।

'मेरे पास यह हीरा कैसे आया, इसके बारे में आपका क्या खयाल है ?' उसने पूछा।

'आपके ठग होने के बारे में अब मेरा विश्वास दृढ़ होता जा रहा है।' मैंने कहा।

'और यदि आला अफसर की मेम अथवा उसका निजी सचिव ठग साबित हुए, तो ?' उसने जिस दृढ़ विश्वास के साथ यह बात कही उसे सुनकर मैं भौंचक्का-सा रह गया।

'आप तो बड़े ही भयंकर हैं।' मेरे मुँह से सहसा यह वाक्य निकल पड़ा।

३ : व्याकुलता और पराजय

'हो सकता है। लेकिन अगर कल तक आपने इस छावनी को यहाँ से उठा न लिया तो परिणाम और भयंकर होगा।' उसने जवाब दिया।

'मगर मुझे इसका कारण तो जानना चाहिए। सिर्फ आपके कहने से मैं इतनी अच्छी जगह छोड़ नहीं सकता। लड़ाई का मुझे भी अनुभव है। यहाँ रहकर मैं ठगों को काबू में रख सकता हूँ।' मैंने कहा।

'ठीक; जैसी आपकी मरजी। तो मैं अब चलूँ। मेरी सलाह मानना-न मानना आपकी मरजी की बात है। सिर्फ एक बात मैं आपसे कहना चाहता हूँ: यह आप कभी मत भूलिएगा कि मैं आपका दोस्त हूँ।' ऐसा कहकर वह खड़ा हो गया। उसके नज़दीक बैठा हुआ 'राजुल' नाम का शेर भी खड़ा होकर चलने लगा। निडरता की साक्षात् मूर्ति-जैसा वह युवक बिना किसी हिचकिचाहट के मेरी छावनी से बाहर निकलकर अन्धकार में विलीन हो गया। मैंने मन-ही-मन सोचा कि इस युवक को ऐसे तो नहीं ही चले जाने देना चाहिए। मैंने अपने विश्वसनीय अंगरक्षक दिलावर को बुलाकर कहा—दिलावर, अभी मेरे पास एक भयानक आदमी आकर चला भी गया है। क्या तुम्हें मालूम है?

'जी हाँ।' उसने जवाब दिया।

'तुम उसके पीछे दौड़ जाओ और उसकी हरकतों पर ध्यान रखो। समय-समय पर मुझे खबर देते रहना। जल्दी जाओ, एकदम!'

'जैसा हुजूर का हुक्म!' कहते हुए सलाम करके वह दौड़ा और वह भी अंधकार में विलीन हो गया। उसके बाद मैं सो गया; मगर मुझे सारी रात उस युवक के ही स्वप्न आते रहे। सवेरे मैं देर से उठा और उठते ही गवर्नर जनरल को एक गोलमोल-सा सन्देशा भेजकर सूचित किया कि कुमारी प्लेफर के सम्बन्ध में जानकारी मिली है और वह अभी जीवित हैं, और चंद्रिका नाम का जो हीरा चोरी चला गया था उसको भी मैंने अपनी आँखों से देखा है। और उसे बरामद करने की कोशिश में हम लगे हुए हैं।'

दोपहर होते ही हमारी छावनी में एकाएक घबराहट फैल गई। सैनिक इधर-उधर दौड़ने लगे। सब घबराये हुए मालूम पड़ते थे। इतने में मेरा सहायक दौड़ा आया और उसने खबर सुनाई कि सरकारी खजाना लुट गया है। मैं चौंककर खड़ा हो गया।

'क्या कहते हो!' मैंने उत्तेजित होकर कहा, 'जब हम खुद अपने धन की रक्षा नहीं कर सकते तो सेना लेकर लोगों को ठगों के उत्पात से बचाने का ढोंग हमें छोड़ देना चाहिए।'

A 595

मेरा सहायक चुपचाप बिना कुछ बोले खड़ा रहा। खजाना किधर लूटा गया, किसने लूटा आदि कई तरह के प्रश्न मैं पूछने लगा। तब मेरा सहायक मुझे बाहर खड़े हुए कप्तान के पास ले गया।

'कप्तान, तुम्हारे रहते ऐसी वारदात ?' मैंने झल्लाकर कहा।

उसने शर्म से सिर झुका लिया।

'तुमको हथियार इस्तेमाल करने के लिए दिये गए हैं, यह तो जानते ही हो न ?' मैंने व्यंग्यपूर्वक कहा।

'हुजूर, मैं हथियार के इस्तेमाल का सबूत दे सकता हूँ।' उसने जवाब दिया। उसकी देह से खून बह रहा था। ऐसे बहादुर सिपाही को डाँटना मुझे अनुचित प्रतीत हुआ।

मैंने कहा—खैर जो हुआ सो हुआ, अब ठग लोगों को काबू में लाना होगा। तुम किस जगह लूटे गए ? और तुमको किसने लूटा ?

'हुजूर, छावनी के बहुत नजदीक ही लूटे गए। इधर से आधा कोस भी नहीं होगा।' उसने जवाब दिया।

मैंने बिगुल बजाने का हुक्म दिया और कप्तान को अस्पताल भेज दिया। फौज को तैयार करके चारों ओर घूमकर दुश्मनों का और खजाने का पता लगाने का हुक्म दिया। जैसे ही मैंने हुक्म दिया, मेरे तम्बू से किसी के ठहाके के साथ हँसने की आवाज सुनाई दी।

मैंने चौंककर भीतर देखा तो उस युवक का हँसता चेहरा नजर आया। मेरी साँस रुक गई। मुझे विचार आया, यह युवक भूत-प्रेत तो नहीं ! मैंने बाहर सेना की ओर नजर डाली। हुक्म के अनुसार सैनिक छावनी के बाहर तेजी से बढ़े जा रहे थे।

मैंने फिर भीतर नजर डाली तो तम्बू में कोई न था। मुझे युवक को देखने का भ्रम हो गया था। मैं तम्बू में गया। कोना-कोना छान मारा। परन्तु तम्बू खाली पड़ा था। मैं अपने पलंग पर लेट गया और खजाने के लुट जाने पर अफसोस करने लगा।

मैं बेचैन था। खजाना कैसे लूटा गया ? अब मुझे नीचा देखना पड़ेगा ! ठगों को नष्ट करने के बजाय हमारा खजाना ही उनके हाथों

में जा पड़ा ! जिस अँग्रेजी सेना ने पेशवाई का नाश किया, सिंधिया, होलकर, निज़ाम आदि पर कब्जा किया, टीपू-सुल्तान-जैसे बहादुर को भी पराजित कर उसका सारा राज्य दूसरे को इनाम में दे दिया, ऐसी वीर सेना का अफसर होकर क्या मैं ठग-जैसे डरपोकों से हार मानूँगा ? कदापि नहीं !

सन्ध्या होते ही सहसा छावनी में खतरे का बिगुल बजने लगा। मैं चौंक पड़ा। तम्बू की खिड़की खोलकर मैंने देखा तो अन्धकार से भरी हुई छावनी में चारों ओर ज्वालाएँ भड़क रही थीं।

आग लगने के भय से मैं दौड़कर बाहर आ गया। वहाँ ज्यादा आदमी नहीं थे, फिर भी मैंने हुक्म दिया—आग बुझा दो; तम्बुओं को तोड़ डालो ! किसी भी अनजान को जिन्दा मत जाने दो।

मैंने अभी यह कहा ही था कि छावनी के एक ओर से कई मनुष्यों के आक्रमण का भ्रम हुआ। मैंने तुरन्त अपने सैनिकों को उसी ओर जाने का हुक्म दिया। दूसरे ही क्षण स्वयं मेरे ही तम्बू में से आग की एक बड़ी-सी लपट निकलती दिखाई दी। मैं मुड़कर तम्बू में घुसा। वहाँ जाकर क्या देखता हूँ कि मेरे बैठने के स्थान के पास ही वह युवक शान्ति से खड़ा था। मेरे आश्चर्य और क्रोध का ठिकाना न रहा।

अब मैं जोर से पुकार उठा—शैतान ! अब मैं तुझे मजा चखाता हूँ—अब तेरी मौत पास ही है !

'जी नहीं ! अभी इस बात को बहुत देर है। आप मुझे शैतान कहें या फरिश्ता, मगर आप भूल गए कि मैंने शुरू से ही छावनी उठाने की आपको सलाह दी थी।' उसने बड़े इत्मीनान से कहा।

'काले आदमियों का हुक्म उठाने को नहीं उनके ऊपर हुक्म चलाने को ही हम पैदा हुए हैं।' मैंने तड़पकर कहा।

'रावण को भी इतना ही घमंड था।' यह कहते-कहते उस युवक की आँखें सिकुड़ गईं। उसके चेहरे पर सख्त रेखाएँ नज़र आने लगीं। हाथ तलवार की मूठ की ओर बढ़ा और अग्नि के प्रकाश में दूसरी ज्वाला के समान लम्बी तलवार बाहर निकल आई।

'आपको मैं अपना कैदी बनाता हूँ। फौरन तम्बू के बाहर निकल जाइए! तम्बू के पीछे दो घोड़े खड़े हैं। चुपचाप एक घोड़े पर बैठ जाइए। फौरन जाइए। मुड़कर देखने पर सिर आपका सलामत नहीं रहेगा।' ऐसा रोब मैंने किसी क्रूर राजा या नवाब-बादशाह में भी नहीं देखा था।

उसके कहने के मुताबिक मैं तम्बू से बाहर निकल आया। चारों ओर धू-धू करती आग जल रही थी। तम्बू के पृष्ठभाग में युवक के कथनानुसार मैंने दो सुन्दर सुसज्जित अश्व देखे। घोड़ों के पास मैंने गेरुए वस्त्र धारण किये हुए एक साधु को भी खड़ा देखा। इसी साधु के मठ में, वह युवक, हमारे प्रथम परिचय पर, मुझे ले गया था। मैं उसी का मेहमान बना था। इसी साधु ने मुझे खाना खिलाया था। मुझे देखते ही वह साधु बोला—आइए साहब! इस घोड़े पर बैठ जाइए। इस आफत में से मैं आपको सही-सलामत निकाल ले जाऊँगा।

मैं घोड़े पर बैठ गया। साधु भी एक छलाँग में दूसरे घोड़े पर सवार हो गया। थिरकते हुए दोनो अश्व आगे बढ़े। तभी एक टोली हमारे सामने आकर रास्ता रोककर खड़ी हो गई। आग, हाथापाई, लड़ाई और चिल्लाहट के शोर-शराबे के बीच साधु ने रकाब पर खड़े होकर मेरे सिर से टोपी खींच ली। इस स्थान पर अँधेरा अधिक था और पीछे जलते हुए तम्बुओं का उजेला किसी को भी चौंधियाने को काफी था।

'दूर हटो! इधर व्यर्थ क्यों भटक रहे हो? तुम्हारा स्थान वहाँ सैनिकों के पास है।' साधु ने डपटकर कहा।

यह सुनते ही टोली के आदमी वहीं-के-वहीं ठिठक गए। शायद वे साधु को पहचानते थे। टोली में से आवाज़ आई—जय नारायण!

'साहब तम्बू में से भाग गया है। हम उसी की तलाश में हैं।'

'अरे हाँ! वह अभी ही निकल भागा। उसको पकड़ते समय उसकी टोपी मेरे हाथ में आ गई। हम भी उसी की खोज में हैं।' इतना कहते हुए साधु ने मेरी टोपी भीड़ की ओर फेंक दी और घोड़े को एड़ लगाकर आगे बढ़ गया। भीड़ ने छँटकर उसके लिए रास्ता बना दिया। अँधेरे में घोड़े पर तना मैं भी उसके पीछे निकल गया।

४ : प्रेम की गूँज

अन्धकार में हम तेजी से आगे बढ़ रहे थे। देखते-ही-देखते हम कई कोस दूर निकल आये।

'थक तो नहीं गए?' साधु ने घोड़े की गति को कम करते हुए पूछा।

'इतनी तेजी से मैंने कभी घोड़ा नहीं दौड़ाया।' मैंने कहा।

'घोड़ों को इतनी तेजी से नहीं दौड़ाते तो आप ज़रूर पकड़ लिये जाते। ठग लोगों ने आपका पीछा किया था।' उसने कहा।

बदले में मैंने उसकी और उसके घोड़े की प्रशंसा की।

रात आधी हो गई थी। अन्धकार में कुछ मकान नज़दीक आते हुए मालूम पड़े। मुझे लगा कि हम किसी गाँव से होकर गुज़र रहे हैं। शान्त सोयी हुई बस्ती से होकर हम गाँव से बाहर निकल आये।

गाँव से बाहर निकलते ही साधु ने मुझे बताया—यह सारा गाँव ठग लोगों का है।

सुनकर मैं काँप उठा।

'क्या गाँव-के-गाँव ठगों से बसे हुए हैं?' मैं बोल उठा।

समीप ही एक बड़ी इमारत थी। मेरे प्रश्न का उत्तर दिये बिना उस इमारत की ओर साधु ने अपना घोड़ा मोड़ दिया। इमारत के दरवाजे के पास घोड़े को खड़ा करके साधु ने दरवाजे की कुण्डी बजाई। आवाज सुनकर एक छोटी-सी खिड़की खुली और अन्दर से किसी ने पूछा—कौन?

'जय नारायण! जय भवानी!' साधु ने उत्तर दिया। 'दरवाजे पर कौन है, भाई? जरा दरवाजा तो खोलो।'

फौरन दरवाजा खुला और एक आदमी ने निकलकर हम दोनो के घोड़ों की बाग थाम ली। साधु ने दोनो घोड़ों को प्यार से सहलाया और थपथपाते हुए उस आदमी से पूछा—आयशा है क्या?

'जी हाँ।' उसने उत्तर दिया।

'घोड़ों को बाँधकर उसे जगाओ। हम आगे के हिस्से में बैठे हैं।'

यह कहकर साधु ने मुझे एक बड़े कमरे में बैठाया। मैं थक गया था, और नींद भी आ रही थी। लेकिन इस विचार-मात्र से कि गाँव ठगों से बसा हुआ है, मेरी नींद उचट गई। इस घर में भी ठग लोग रहते हैं? अगर ऐसा है तो यह साधु मुझे यहाँ क्यों लाया? और अगर वही ठग हुआ, तो?

इतने में भीतर की ओर का एक दरवाजा खुला और हाथ में छोटी लालटेन लिये एक युवती ने अन्दर प्रवेश किया। मेरा जातीय घमण्ड कि सिर्फ अँग्रेज युवतियाँ ही सुन्दरी होती हैं, इस सुन्दरी को देखते ही चूर हो गया। उसके अनुपम सौन्दर्य को देखकर मैं अपने स्थान पर स्तब्ध बैठा रहा।

उसके अन्दर आने पर साधु खड़ा हो गया। उसकी आँखें जगमगा उठीं, चेहरा थोड़ा गम्भीर हो गया और नीचे देखते हुए उसने कहा—आयशा, मैं बिलकुल अचानक ही आ गया हूँ।

उत्तर में आयशा ने जमीन पर गड़ी हुई आँखों को उठाकर साधु की ओर ताका।

अप्सरा और साधु? दोनों का क्या सम्बन्ध हो सकता है? मैं मन-ही-मन सोचने लगा।

आयशा ने साधु को कोई उत्तर नहीं दिया। वह सिर्फ उसके सामने देखती रही।

'एक बहुत जरूरी काम है। और तेरे सिवा उसे कोई कर नहीं सकता।' साधु ने भी आँख झुकाये हुए कहा।

'पूछने की क्या जरूरत है?' आयशा ने उत्तर दिया।

'तुम्हारे इस दुश्मन को आज की रात आश्रय देना होगा। क्या दे सकोगी?' साधु ने मेरी ओर संकेत करते हुए कहा।

'पनाह देने में दोस्त और दुश्मन का भेद हम कब करते हैं? मेहमान के लिए मेरा गरीबखाना हमेशा खुला है।' आयशा ने कहा।

'इन साहब को हवेली के किसी गुप्त स्थान में छिपाकर रखना होगा। कल रात मैं इन्हें वापस ले जाऊँगा।' साधु ने कहा।

'तो क्या आप अभी ही जाना चाहते हैं ? रात अँधेरी है और कड़ाके की सर्दी पड़ रही है। क्या रुक जाने में कोई हर्ज है ?'

साधु कुछ मुस्कराया और बोला—इस वक्त मैं ठहर नहीं सकता। अभी तो लौट ही जाना होगा।

फिर साधु ने अपनी आँखें ऊँची उठाईं और आयशा की तरफ देखा। और तत्काल ही अपनी आँखें झुका लीं और मेरी दृष्टि से ओझल हो गया। आयशा देर तक उसकी ओर टक लगाकर देखती रही। कुछ क्षणों के बाद आयशा ने इशारे से मुझे साथ चलने को कहा। मेरे लिए और कोई चारा न था; मैं उसके पीछे हो लिया।

विनम्रता और शिष्टता से अस्पष्ट उत्तर-देती हुई आयशा मुझे एक छोटी-सी कोठरी में ले गई। कोठरी की खिड़कियाँ उसने खोल दीं और एक पलंग दिखाकर उस पर आराम करने को कहा। उसने यह भी बताया कि मुझे इसी कोठरी में छिपकर रहना होगा।

जैसे ही वह गई कोठरी के बाहर ताला लग गया। मैं इस जगह कैदी हूँ इस बात का मुझे यकीन हो गया। फिर भी मैं इतना थक गया था कि अपनी इस हालत पर सोचने-विचारने के बदले पलंग पर जाकर लेट गया और खर्राटे भरने लगा।

सुबह के प्रकाश और पंछियों की मधुर आवाज से मैं जाग पड़ा। उठते ही मैंने देखा तो नाश्ता मेरे सामने तैयार था। ठीक इसी समय दूर से आती हुई घोड़ों के टापों की आवाज मेरे कानों में पड़ी।

हठात् मेरी कोठरी का दरवाजा खुला और आयशा को मैंने अपने सामने खड़ा पाया।

आयशा ने कहा—आज दिन-भर चले इतना खाना और पानी आपके लिए रख दिया है। आप बड़ी खिड़की को बन्द ही रखें और जिस खिड़की को खुला रखें उसमें से हर्गिज न झाँकें।

आवाज से ऐसा लगा कि घोड़े अब इस मकान के चौक में पहुँच गए हैं। आयशा फुर्ती से कोठरी के बाहर चली गई और बाहर से ताला बन्द कर दिया।

अब मैं अकेला था। अपने कैदी होने का अहसास मुझे बड़े जोरों से हो रहा था।

कोठरी में मैं पूरी तौर पर बन्द था। मेरी अशान्ति बढ़ गई थी। बढ़ते हुए कोलाहल से विश्वास हो गया कि बाहर से बहुत-से आदमी इमारत में आ गए हैं। इसी तरह दिन दोपहर हो गया। भागने की सब आशा छोड़कर मैं सो गया। जब मैं उठा तो अपनी कोठरी के पास ही कुछ व्यक्तियों को बातें करते सुना।

'आयशा, एक ही शर्त पर तू बच सकती है।' किसी की आवाज सुनाई दी।

'बचने के लिए शत ? शत मानकर बचना मुझे सौ जन्म भी मंजूर नहीं।' मैंने आयशा की आवाज को पहचाना।

'इस कोठरी को खोलने पर यह साबित होगा कि तूने किसको छिपाया है ? आयशा, मैं सब-कुछ जानता हूँ। बचने के लिए सिर्फ एक ही शर्त है।' पुरुष की आवाज में विजय की ध्वनि थी।

थोड़ी देर में उस पुरुष की आवाज फिर सुनाई दी—आयशा, तू बड़ी बेरहम है।

'बेरहमी तो मैंने कभी नहीं की।'

'क्या तूने मेरे तड़पते जिगर को नहीं देखा ? आयशा, मैंने कई दफ़ा तुझसे मुहब्बत की भीख माँगी है। बार-बार दामन फैलाया है। क्या तूने हर बार ठुकरा नहीं दिया है ?'

आयशा ठहाका मारकर हँस दी। मैंने मन-ही-मन कहा—हुँ ! यहाँ भी प्रेम की बातें चल रही हैं। ठग लोगों में भी प्रेम के किस्से चलते रहते हैं।

हँसने के बाद आयशा बोली—वैसे तो सारी दुनिया दामन फैलायेगी। मगर सारे आलम के दामन को मैं क्या करूँ ?

आयशा के इस जवाब में हँसी अब भी गूँज रही थी। उसके व्यंग्य का डंक सामनेवाले आदमी से छिपा न रहा। उसने जल-भुनकर और बड़ी कठोरता से कहा—क्या तुम दूसरों से मेरी तुलना करती हो ?

'हर्गिज़ नहीं। आपकी काबलियत तो बहुत ऊँची है। इसी लिए तो आप इतने ऊँचे ओहदे पर हैं।' आयशा ने मधुर स्वर में उत्तर दिया। ठग लोगों में भी काबलियत के अनुसार ओहदे दिये जाते हैं, यह बात मुझे मालूम थी। बाकायदा सेना की तरह उनमें भी नायक, जमादार, हवलदार आदि दर्जे होते थे।

'तो फिर तू मुझे चाहती क्यों नहीं है? मुहब्बत का बदला मुहब्बत से क्यों नहीं दिया जाता?'

'क्या इतना भी आप नहीं जानते कि मुहब्बत की रीति निराली होती है। उस पर किसी का कोई बस नहीं चलता।' आयशा ने उत्तर दिया।

वह आदमी फिर उत्तेजित होकर बोलता हुआ सुनाई दिया—'हुँ, तभी तो एक काफिर को तू मुझसे ज्यादा काबिल समझती और मुझ पर तरजीह देती है, क्यों।'

आयशा ने कहा—मुझे कौन पसन्द है और कौन नहीं, इस बात का फैसला मुझी को करने दो। हम ठगों के धर्म में—महाकाली के पंथ में तो सब एक हैं, सब बराबर हैं। इस बात को कभी भूलना नहीं चाहिए। मजहब का गलत इस्तेमाल करने पर नतीजा बुरा होता है, यह आपको जरूर मालूम होगा।

थोड़ी देर के लिए शान्ति छायी रही। अन्त में मेरे कानों पर ये कठोर शब्द पड़े—अच्छी बात है। अब देखना कि तेरे, उसके और इस कमरे में छिपाये हुए फिरंगी के क्या हाल होते हैं!

इसके बाद किसी के पाँवों की चाप को मैंने कमरे से बाहर की ओर जाते हुए सुना। मैं अपनी जगह सुन्न खड़ा था। मैंने सोचा, ठग लोगों से विरोध मोल लेकर मुझे बचाने का षड्यंत्र उस युवक ने किया था और साधु के साथ, अपनी प्रिया के पास, मुझे छिपाने को भेज दिया था।

५ : तहखाने में गोरी-काली ठगी

शाम तक कोई खास घटना न घटी। इसलिए अँधेरा होते ही मैंने खिड़की खोली और नीचे झाँका। आँगन में हथियारबन्द पहरेदार खड़े थे। उनमें से कइयों ने खिड़की खुलते ही मुझे देखा और एक साथ सबने मेरी ओर अँगुली उठाई।

मैंने फौरन खिड़की बन्द कर ली। मगर अब तो मुझे बहुत से लोगों ने देख ही लिया था। इस गलती का मुझे बहुत अफसोस हुआ। लेकिन अब इलाज भी क्या था?

थोड़ी ही देर में बीस-पच्चीस आदमियों की पदध्वनि मेरे कमरे के पास सुनाई दी। मैंने सोचा कि अब सारा खेल खतम हुआ!

'आयशा, तुझे मालूम तो होगा ही कि तू यहाँ क्यों रखी गई है?' कोई भारी आवाज से बोला।

आयशा ने कहा—मेरे रूप और बुद्धि को खिलौना बनाने के लिए तो नहीं ही।

'बेटी, तू समझती नहीं है। अब बचपना छोड़ और देखने दे कि तेरे कमरे में कौन छिपा है?'

'अपना कमरा मैं नहीं खोलने दूँगी।'

'तो हम जबरदस्ती खोलेंगे।'

'हाँ, भाई के सिवाय दूसरा कौन इतनी बेइज्जती कर सकता है?'

'तू कुछ भी कह। तुझ पर जब इल्जाम लगाया गया है तो मुझे सबूत देना ही होगा। आजाद ने मुझसे शिकायत की है और तुझ पर इल्जाम लगाया है और सिर्फ इसी लिए मुझे आना पड़ा है। अभी ही थोड़ी देर हुई अपनी फौज के कितने ही सिपाहियों ने तेरे कमरे में छिपे हुए गोरे को अपनी नजरों से देखा है। भाई-बहन का रिश्ता बिरादरी का सवाल उठने पर अलग रख देना पड़ता है, यह तो तुझे मालूम ही है?' इतनी शान्ति से आयशा को समझाने की कोशिश करनेवाला यह उसका भाई होना चाहिए, ऐसा उनकी बातचीत से मालूम होता था।

अब बचना असम्भव था। मृत्यु को ठीक अपने सामने खड़े देखकर मेरा हृदय साहस से भर गया। अपनी कटार हाथ में लेकर, दरवाजे से सटकर मैं खड़ा हो गया। सहसा कमरे के मध्य भाग की ज़मीन मुझे उठती हुई मालूम दी। दूसरे ही क्षण एक तहख़ाना खुलता हुआ नज़र आया। अन्धकार में दृष्टि को गड़ाकर देखा तो एक आदमी लटकती डोर को पकड़कर अन्धकार में से ऊपर आ रहा था।

'साहब, जल्दी नीचे चले आइए।' रस्से पर चढ़ते हुए आदमी ने ऊपर आकर धीरे से कहा।

मैंने आवाज़ को पहचाना। उस युवक की आकृति को भी मैंने पहचान लिया।

मेरे उस स्थान पर होने के सभी चिह्नों को उसने मिटा दिया। फिर दरवाजे की कुण्डी खोल, मेरा हाथ पकड़े, तहख़ाने के पास खींचकर, पहले मुझे रस्से से लटकने को कहा और तब वह स्वयं भी लटक गया। हम दोनो नीचे उतर आये और मेरे पाँव जमीन को छूने लगे।

'भाई, अब किधर ले जाओगे?' मैंने निराश होकर पूछा।

'आप बिलकुल सुरक्षित हैं।' उसने कहा।

'मगर आयशा का क्या होगा? उस पर क्या बीतेगी?'

मुझे वह रूपवती युवती याद हो आई। मेरे लिए जिसने इतना खतरा उठाया था उसकी चिन्ता न करूँ, इतना असभ्य और हृदयहीन तो मैं था नहीं।

'उसका क्या होगा? कुछ भी न होगा। आपको छिपाने का इल्जाम उस पर लगाया गया था। मगर आपका पता तो उन लोगों को मिला नहीं। ऐन मौके पर हम निकल भागे। एक पल की भी देर होती तो बात बिगड़ जाती। असल में आजाद हमारा दुश्मन हो गया है।'

'यदि हम कमरे से निकल न पाते, तो आयशा के क्या हाल होते?'

'भवानी को उसका बलिदान चढ़ा दिया जाता।' युवक का स्वर काँपता हुआ प्रतीत हुआ। तो क्या इतना भयानक संकट

सिर पर लेकर आयशा ने मुझे छिपाया था ? मैं उपकार और आश्चर्य के भाव से दब-सा गया।

'भाई, क्या मैं एक बात पूछ सकता हूँ ?'

'हाँ, जरूर पूछिए।'

'आयशा उस साधु से प्यार करती है न ?' मैंने संकुचित होते हुए पूछा।

युवक थोड़ा मुस्कराया और मुस्कराते हुए ही बोला—दुनिया में पागलों की कमी नहीं है। ऐसा भी हो सकता है।

मैंने वार्तालाप बन्द कर दिया। थोड़ा आगे जाने पर बिलकुल अँधेरा छा गया। युवक ने कहा—अब हमें रस्से से ऊपर चढ़ना होगा। मेरे पीछे-पीछे चले आइए।

उसने रस्सा मेरे हाथ में थमा दिया और मुझे ऊपर चढ़ने को कहा। मैं रस्सी पकड़कर चढ़ने लगा। बिलकुल घुप्प अँधेरा था, मगर ज्यों-ज्यों मैं ऊपर चढ़ता गया हलका-हलका प्रकाश दिखाई पड़ने लगा।

मैंने नीचे देखा, मगर युवक मेरे पीछे आता दिखाई नहीं दिया। मुझे डर लगने लगा। मगर अब ऊपर जाने के सिवाय और कोई चारा ही न था। ऊपर चढ़ते ही एकाएक उस साधु की मूर्ति मेरे सामने आकर खड़ी हो गई। थोड़ी देर पहले मैंने ही उसके प्रेम-सम्बन्ध के बारे में उल्लेख किया था। मैं ऊपर चढ़ गया।

'बहुत अच्छा हुआ कि आप बच गए।' साधु ने मुझे ऊपर खींचकर एक सजे हुए पलंग पर बैठाते हुए कहा।

'मुझे अपनी जान से अपनी सेना की अधिक चिन्ता है। अब आपको मुझे रिहा कर देना चाहिए।' अपनी जली हुई छावनी और लुटे हुए खजाने के पीछे भेजी हुई सेना का विचार आते ही मैंने कहा।

'इतनी रात बीते आप कहाँ जायेंगे ? और यदि आप जा भी सकें तो भी हम आपको जाने नहीं दे सकते।' साधु ने दृढ़ता से जवाब दिया।

मैंने पूछा—आप मुझे क्यों नहीं जाने देते ?

'आप मेरे कैदी हैं, इसलिए।'

'मैं कैदी !' गुस्सा होकर मैं पुकार उठा। हिन्दुस्तानी मुझे कैद कर सकते हैं, यह विचार तक मेरे लिए असहनीय था।

'अवश्य।' साधु ने अपनी स्वाभाविक दृढ़ता से उत्तर दिया।

'कम्पनी सरकार के हाथ कितने लम्बे हैं, यह तो आपको मालूम ही होगा। अँग्रेजों के खून की एक बूँद आपके लाखों आदमियों की जान के बराबर है, क्या आप यह नहीं जानते ?' मैंने क्रोध कर काबू पाते हुए अँग्रेज सरकार का भय दिखाया।

उत्तर में वह मुस्कराया और बोला—अँग्रेज के खून की एक बूँद भारत की लाखों जानों के बराबर क्यों मानी जाये ? अँग्रेज के खून में ऐसा क्या है ?

इसका कोई उत्तर मेरे पास न था। साधु ने आँखें मूँद लीं और अपने हाथ की माला फेरने लगा। क्षण-भर वह वैसे ही बैठा रहा, बाद में उसने आँखें खोलीं।

मैंने हँसते हुए उससे पूछा—क्या आप जादू कर रहे थे ?

'नहीं, मैं अँग्रेजों के जादू के बारे में सोच रहा था।'

'अँग्रेजों के जादू को आप नहीं समझ सकेंगे। आप हजारों वर्षों तक खोज करते रहें फिर भी उसका पता शायद ही मिले।' मैंने अभिमान के साथ उत्तर दिया।

मेरे अभिमान-भरे शब्दों का मानो उस पर कुछ असर ही नहीं हुआ। उसने मुझसे दूसरा प्रश्न पूछा, जिसका हमारी इस बात के साथ कोई वास्ता ही नहीं था।

'आपको सरकार ने किस काम के लिए नियुक्त किया है ?'

'ठगों को पकड़ने के लिए।' मैंने उत्तर दिया।

साधु जोर से हँस पड़ा। हँसते-हँसते उसने कहा—काम तो बहुत आसान है। जितने भी टोपीवाले हैं उनको पकड़ लो और काम पूरा हो जायेगा।

ऐसा दुर्विनीत उत्तर सुनकर मेरा चेहरा कठोर पड़ गया। मैंने पूछा—क्या आप अँग्रेजों को ठग मानते हैं ?

'सिर्फ अँग्रेजों को ही नहीं सभी टोपधारियों को।' उसने हँसते-हँसते जवाब दिया।

'यह आपकी भूल है। योरप-निवासी इतने खुले दिल के हैं, सत्य के ऐसे पुजारी हैं कि झूठ में पले हुए भारतवासी उनकी उच्चाशयता को कभी समझ ही नहीं सकते।' मैंने कहा।

'खुला दिल ? सत्य की पूजा ? साहब, मैंने इतने साल व्यर्थ नहीं बिताये हैं। अँग्रेजों ने हिन्दुस्तान में पैर रखा तब से आज तक उन्होंने कितना खुला दिल रखा, सत्य की कितनी पूजा की, इसके उदाहरण आप चाहें तो मैं एक नहीं हजार दे सकता हूँ।'

'कहिए-कहिए। अपने इतिहास से हमें लज्जित नहीं होना पड़ेगा।' मैंने अभिमानपूर्वक कहा।

'ऐसी बात है ! मगर क्या आप सुन सकेंगे ? लीजिए थोड़े-से उदाहरण देता हूँ। बंगाल के उस बेचारे सिराज के सिर कालकोठरी का जो कलंक लगाया था, उसमें कितना सत्य था, इसे क्या आप जानते हैं ? मीर कासम को धोखा देकर बंगाल की गद्दी पर कब्जा करवाया और फिर उसे धकेल दिया, इसमें आपको खुला दिल दिखाई पड़ता हो तो आप जानें। और अमीचन्द को पागल बनाने में कौन-सा सत्य छिपा था ? चेतसिंह को काशी से भागना पड़ा, अयोध्या की बेगमें बेहाल हो गईं, हैदर और टीपू का राज्य और पेशवाई नष्ट-भ्रष्ट कर डाली। क्या आप इन सब घटनाओं के सच्चे इतिहास को सुनना चाहते हैं ? जो घटनाएँ मैंने ऊपर बताईं उनमें सत्य कितना था और खुला दिल कितना था ? जिन ठग लोगों को कैद करने के लिए आप तत्पर हैं उन लोगों की ठग-विद्या आप टोपीवालों जितनी भयानक शायद ही हो।' साधु बहुत उत्तेजित हो उठा था। उसके नेत्रों से अंगारे निकल रहे थे। परन्तु चेहरा पूर्ववत् मुस्करा रहा था। जाने क्यों उस युवक और साधु का चेहरा मुझे एक-जैसा दिखाई दिया।

मैंने बात बढ़ाने के हेतु से आगे पूछा—तो हम भी ठग हैं और आप भी। तब तो हम दोनों को एक हो जाना चाहिए, मिलकर चलना चाहिए।

साधु फिर से हँसा और बोला—मगर हमको आपने ठग कैसे मान लिया ?

'मेरे पास इसके अनेक सबूत हैं। मुझे तो विश्वास हो गया है कि आप लोग भयानक ठगों की टोली के भयानक अगुआ हैं।'

'तो फिर हमें क्यों नहीं पकड़ते ?' साधु ने बड़े ही भेद-भरे ढंग से पूछा। उसका यह प्रश्न स्पष्ट ही मेरी परिस्थिति पर व्यंग्य था।

'जिस सत्ता की आप निन्दा कर रहे हैं, वह इतनी जबर्दस्त है कि आपको मालूम भी नहीं होगा और आप गिरफ्तार कर लिये जायँगे। इसलिए जोर देकर कहता हूँ कि आपको हमारे साथ मिल जाना चाहिए। आप लोगों ने बड़े विचित्र ढंग से मुझे उपकृत किया है, इसलिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि ठगी को छोड़कर अँग्रेजी राज्य के शान्ति-प्रिय नागरिक बन जाइए।' मैंने कहा।

'हमारा और आपका रास्ता ही अलग है। हम ठग जरूर हैं। फिर भी आपकी और हमारी ठगी में अन्तर है। हमारी ठगी पर गेरू का भगवा रंग है, जिसे आप देख सकते हैं।'

६ : गुप्त स्थान में मेरी परीक्षा

एकाएक मेरे सामने का दरवाजा खुला और धीरे से खुलते हुए उस दरवाजे के पीछे जैसे मुझे अपना विश्वासपात्र और बहादुर नौकर दिलावर दिखाई दिया। मेरा भ्रम दूर होने के पहिले ही दरवाजा बन्द हो गया। मैं निर्णय नहीं कर पाया कि यह मेरी भ्रान्ति थी अथवा वास्तविकता; पर मैं चकित अवश्य हुआ। सोचने लगा कि कहीं दिलावर दुश्मनों से मिल तो नहीं गया ? या छिपता हुआ यहाँ तक आ तो नहीं पहुँचा ? साधु ने भी उसे देखा या नहीं, यह जानने के लिए मैंने उसकी

ओर देखा। परन्तु दरवाजा खुलने की मानो उसे खबर ही न हो इस प्रकार वह वहाँ से जाने के लिए उठते हुए मुझसे बोला—आप अब आराम कीजिए। अनेक आश्चर्यजनक बातें देखने के बाद मन को शान्ति की आवश्यकता होती है। हम दुश्मन हो सकते हैं, मगर आपको तनिक भी नुकसान नहीं होगा, इसका मैं विश्वास दिलाता हूँ।

इतना कहकर वह कमरे से बाहर चला गया और मैं आराम करने के लिए पलंग पर लेट गया।

आँखें खोलकर देखता हूँ तो जो दरवाजा पहले खुलकर बन्द हो गया था वही फिर से खुला और मैंने पुनः दिलावर-जैसी आकृति को देखा। अब तो पक्का विश्वास हो गया कि मेरा नमकहलाल पहरेदार दिलावर ही वहाँ खड़ा था।

मैं उठ खड़ा हुआ। दिलावर को मैंने ध्यान से देखा और उसे अपने पास बुलाया। इस लम्बे-तगड़े सैनिक को देखकर मेरा साहस भी बढ़ा। मेरी टुकड़ी में दिलावर ही सबसे बलवान सैनिक माना जाता था। अनेक मोर्चों पर उसने वीरता दिखाई थी और उसकी वीरता से प्रभावित होकर ही मैंने उसको अपना अंगरक्षक नियुक्त किया था।

मैंने पूछा—दिलावर, तू यहाँ कैसे?

'अरे साहब! आप इस भयानक जगह में कैसे फँस गए? यह मकान तो सुमरा ठग का है।' उसने आश्चर्यचकित होकर कहा।

'सुमरा ठग! क्या वह यहाँ रहता है?' मुझसे रहा न गया, मैं पूछ ही बैठा। सुमरा ठग का नाम सारे हिन्दुस्तान में मशहूर था उसकी क्रूरता बड़े-बड़ों को दहला देती थी। फिर भी उसकी बहादुरी की चर्चा घर-घर सुनी जाती थी। भारत के बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ भी उसकी बुद्धि का लोहा मानते थे। बड़े-बड़े राजा-नवाब लुक-छिपकर उससे सलाह-मशविरा करते थे। सर्वसाधारण का ऐसा विश्वास था कि उसमें कोई गूढ़ अगम्य दैवी शक्ति विद्यमान है, जिसकी बदौलत वह असम्भव और अविश्वसनीय कार्य भी कर सकता है। इसी लिए प्रत्येक अद्भुत प्रसंग में उसका हाथ माना जाता था। उसके पकड़े जाने

ही ठगों के संगठन की इमारत ढह जायेगी, ऐसा लोगों का खयाल था। मगर सुमरा यहाँ कहाँ ?

सुमरा ठग के नाम से प्रसिद्ध समरसिंह कौन है, इसे तो शायद ही कोई जानता था। कोई कहता कि वह वृद्ध है तो कोई कहता कि वह युवक है। ऐसी भी मान्यता थी कि कोई बुद्धिमती नारी सुमरा के भेष में ठग लोगों का नियंत्रण करती है। कोई मानता था कि वह साधु , तो कोई कहता था कि वह गृहस्थ है और राजसी ठाठ से रहता है। मगर सुमरा के बारे में हमें कभी भी पूरा पता न लग सका। पता लगाने पर हर बार यही बात सामने आती थी कि सुमरा को पकड़ लो और ठग लोग तितर-बितर हो जायेंगे। मगर सुमरा कौन है, किधर रहता है, वह कैसे पकड़ा जाये, इन सवालों का कभी उत्तर नहीं मिला। और उसी सुमरा के मकान में मैं बन्दी था ! भय की एक सिहरन मेरे सारे शरीर में दौड़ गई। मगर सुमरा कौन है—साधु या वह युवक ?

दिलावर ने जब सुमरा का नाम लिया तब ये सब विचार मेरे दिमाग में चक्कर काटने लगे।

'दिलावर, अब कौन-सा रास्ता लिया जाये ? मैं और तू दोनों फँस चुके हैं।' मैंने पूछा।

'जी नहीं, मैं तो फँसा नहीं हूँ।' दिलावर ने धीरे से कहा, 'आप फौरन चलिए। इस मकान से किसी भी मार्ग से हमें निकल जाना चाहिए।'

'क्या तुमने रास्ता देखा है ?'

'जी हाँ। जल्दी चलिए।'

मैं फौरन उठ खड़ा हुआ। जिस दरवाजे से दिलावर आया था उसी से हम बाहर निकले।

कमरे के बाहर मैदान था। स्वच्छ चाँदनी खिली हुई थी।

थोड़ी देर के बाद हम एक गुफा के पास आये। अँधेरा तो था ही, फिर भी चाँदनी का प्रकाश उस स्थान को अधिक भयानक बना रहा था।

मैं जरा रुका, तो दिलावर ने कहा—यह ठग लोगों के चढ़ने-उतरने का गुप्त रास्ता है। नीचे गहरी घाटी है और उसमें उतरने के लिए रस्सियों की सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। क्या आप उतर सकेंगे ?

विचित्रताओं और मुसीबतों ने मुझे बिलकुल सहनशील तथा निडर बना दिया था। मैंने साहस करके हामी भरी। नीचे सैकड़ों फुट गहरी घाटी और उतरने का आधार केवल रस्सियों की सीढ़ी ! पहले दिलावर उतरा और उसके पीछे मैं। आधे रास्ते पर एक पहाड़ी आई। हम दोनो थकावट मिटाने के लिए खड़े हो गए। गुफा की दीवार में एक जाली-सी दिखाई दी। मेरी उत्सुकता बढ़ गई और उसमें नजर करके देखा तो उधर भी एक सुन्दर मकान का भाग दिखाई दिया। उस मकान के बरामदे में एक सुन्दर अँग्रेज बाला पलंग पर बैठी आँखें मल रही थी। वह प्लेफर साहब की लड़की तो नहीं है, जब मैं यह सोच रहा था। तो उस लड़की का ध्यान भी जाली की ओर गया। परन्तु उसी क्षण दिलावर ने मुझे अपनी ओर खींचा, और जाली की राह देखने से नम्रतापूर्वक रोका। उसके कहने के अनुसार सारा पहाड़ खोदकर उसमें रहने के मकान ठग लोगों ने बनाये थे। किसी को मालूम न हो, इस तरह अनजाने स्थानों पर ठग लोगों का निवासस्थान निकल आता था। छोटी दरारें, प्राकृतिक गुफाएँ, पहाड़ियों का पोलापन आदि प्राकृतिक स्थानों का उपयोग करके कृत्रिम जालियाँ, उजेला और हवा के आने के स्थान और आने-जाने के रास्ते बना लिये जाते थे। ये स्थान एक-दूसरे से ऐसे गुँथे और जुड़े हुए रहते थे कि एक से दूसरे में और दूसरे से तीसरे में जाने का कोई-न-कोई गुप्त मार्ग अवश्य निकल आता था।

लेकिन मैं तो उस अँग्रेज बाला के बारे में सोच रहा था, जिसे मैंने जाली के उस पार देखा था। वह ऐसे भयानक स्थान में लाकर क्यों रखी गई ? अपनी पुत्री के अपहरण के बाद कप्तान प्लेफर की स्थिति बड़ी दयनीय हो गई थी। यह बात सभी को मालूम थी। मैंने दिलावर से कहा कि आओ, हम इस लड़की को छुड़ा ले चलें। मगर उसने कहा कि दूसरी बार अधिक सेना तथा साधनों के साथ आकर छुड़ा ले

जाना अधिक आसान और अधिक बुद्धिमानी की बात होगी। इसके बाद पहाड़ी से नीचे उतरने के लिए हम तैयारी करने लगे। ठीक तभी ऊपर से किसी ने ताली बजाई। ऊपर नजर उठाकर देखा तो ऐसा भ्रम हुआ मानो दो गोरे हाथ जाली में से निकलकर ताली बजा रहे हों। दिलावर ने अपनी नाराजगी दिखाने के लिए खूब मुँह बिचकाया, मगर गोरे हाथों के इशारे को अनदेखा करके चले जाना मुझे उचित न लगा। ऐसा करना मेरी मर्दानगी के लिए लांछन ही होता।

मैं फिर ऊपर चढ़ गया, और जाली के निकट आते ही समीप की दीवार में बनी एक गुप्त खिड़की में से कुमारी प्लेफर ने हमें भीतर ले लिया। मुझे देखकर वह अत्यन्त खुश हुई। हम दोनों को उसने कुर्सी पर बिठाया और ऐसे भयानक स्थान में कैसे आ गए, यह उत्सुकता-पूर्वक पूछने लगी। वह मुझे थोड़ा-बहुत पहचानती थी। कभी अपने पिता के पास आते-जाते उसने मुझे देखा होगा। अपने पिता के समाचार पूछते हुए उसकी आँखों में पानी भर आया। मैंने सारा हाल थोड़े में बता दिया और उसे अपने साथ चलने को कहा।

'मैं यहाँ से जा तो सकती ही नहीं। दुःख भी किसी बात का नहीं है। केवल पिताजी से मिलने की तीव्र इच्छा है।' कुमारी प्लेफर ने उत्तर दिया। वह मटिल्डा के नाम से पुकारी जाती थी।

'तो फिर मेरे साथ आने में हिचकिचाती क्यों हैं? मैं आपको अपने साथ ले जा सकूँगा।' मैंने कहा।

'यही तो आपकी भूल है। मुझे कोई भी यहाँ से ले नहीं जा सकता।' कहते-कहते उसकी नजर चौकी के ऊपर रखी हुई तस्वीर की ओर उठ गई। मैंने भी उस ओर देखा और देखकर हैरान रह गया कि उसी शेरवाले युवक की सुन्दर तस्वीर यहाँ भी रखी हुई थी।

'यह भयानक लड़का क्या यहाँ भी है?' मैं बोल उठा।

कुमारी प्लेफर ने बताया, 'इस तस्वीर को मैंने स्वयं अपने हाथों से बनाया है।' उसकी बोली बड़ी मधुर हो गई थी। और उसके नेत्रों में प्रेम का अमृत छलक आया था। यह देखकर मैं तो दंग ही रह गया।

आज़ादने कहा—कल बच गए तो अकड़ते हो ! आज बचना मुश्किल है ।

क्या यह लड़की उस ठग से प्यार करने लगी है ? मेरे मन को उलझाने-वाला जटिल प्रश्न उत्पन्न हुआ और पिछले दिन देखी हुई आयशा की याद मुझे तुरन्त हो आई। सच ही, स्त्रियों को अपनी ओर आकर्षित करने की उस ठग की चतुराई विस्मयजनक थी। परन्तु अँग्रेज युवती का काले पुरुष की ओर आकर्षित होना मुझे तनिक भी नहीं सुहाया। सहसा उस युवती के चेहरे पर भय की छाया फैल गई और उसने फौरन अपना चेहरा घुमा लिया। उसके इस परिवर्तन का कारण जानने के लिए जैसे ही मैंने मुँह घुमाया कमरे के सामने का दरवाजा खुल गया और उसके बीचोबीच एक कद्दावर मनुष्य मेरे देखने में आया।

थोड़ी देर वह दैत्याकार मनुष्य दरवाजे में ही ठिठका खड़ा रहा। फिर धीरे-धीरे आगे बढ़ा। जैसे ही वह दरवाजे में से हटा उसका स्थान उसी जैसे एक दूसरे कद्दावर आदमी ने ले लिया। उसको नजदीक आता देख मटिल्डा ने अपने हाथ आँखों पर रख लिये। एक तीखी चीख उसके मुँह से निकल गई। अपनी पूरी सामर्थ्य से मटिल्डा की सहायता करने का निश्चय करके मैं कुर्सी से उठा और डपटकर बोला—खबरदार, आगे मत बढ़ो !

आगन्तुक ने मुस्कराते हुए ही अपना नीचे का ओठ दाँतों के तले दबाया और एक-एक शब्द पर जोर देता हुआ बोला—कल बच गए इसी लिए इतना जोर दिखा रहे हो, क्यों ? मगर आज बचना मुश्किल है।

उसकी आवाज पर से मैंने पहचान लिया कि यही आदमी आयशा का प्रेमी और दूसरा महान ठग आजाद है।

'मुश्किल शब्द नामर्दों के लिए रहने दो।' मैंने कहा, 'आज तुम्हारा वास्ता गोरों से पड़ा है, और यह स्त्रियों को डराने की तरह आसान काम नहीं है।'

'गोरों से निपटना मुझे भी आता है। सच पूछो तो मैं भी गोरा बनना चाहता हूँ। इसी लिए इस मेम को लेने आया हूँ।' उसके इन क्रूर शब्दों को सुनकर मटिल्डा ने दोनों कानों पर अपने हाथ रख लिये।

'क्यों मेम साहिबा, अब तो साथ चलोगी न ? किस बात में मैं सुमरा से कम हूँ ?' एक आँख सिकोड़कर मटिल्डा को सम्बोधित करके वह बोला।

'मैं न कहीं जाना चाहती हूँ न आना। मुझे परेशान किया तो भगवान तुमसे समझेगा।' मटिल्डा ने करुण स्वर में उत्तर दिया।

आज़ाद भी सुमरा के ही समान दूसरा भयानक ठग था। उसका नाम भी बहुत विख्यात था। सुमरा और आज़ाद के बीच आयशा और मटिल्डा को लेकर पारस्परिक स्पर्द्धा होनी चाहिए, ऐसा सन्देह मुझे हुआ। अब भी दुनिया में स्त्रियों को लेकर लड़ाई होती है, यह देख मुझे अपार दुःख हुआ।

जैसे ही आज़ाद ने एक कदम आगे बढ़ाया मैं मटिल्डा और आज़ाद के बीच आ खड़ा हुआ।

'ठगों को पकड़नेवाले साहब हो न ?' अट्टहास करते हुए आज़ाद ने मेरी हँसी उड़ाई और तब घुड़ककर बोला, 'बीच में से हटता है या नहीं ? यह सुमरा नहीं है कि छोड़ देगा।'

मैंने ठठाकर हँसते हुए कहा—देखता हूँ अपने भारी शरीर से तू क्या करता है ?

और बिजली की तेजी से आज़ाद मुझ पर टूट पड़ा। उसकी इस फुर्ती के लिए मैं तैयार न था, फिर भी मुझमें जितनी ताकत थी उस सब को बटोरकर मैं आज़ाद से जूझ गया।

इसी बीच हमारी मारामारी से लाभ उठाकर, दिलावर ने मटिल्डा को लेकर, जिस खिड़की से हम आये थे, उसकी राह भागने का प्रयत्न किया। यह देखकर मैं खुश हुआ। परन्तु तभी दरवाजे में खड़ा हुआ वह दूसरा भारी-भरकम आदमी उस पर टूट पड़ा। साथ ही छः-सात आदमी बाहर से और दौड़ आये और सबने मिलकर दिलावर को पकड़ लिया। मटिल्डा लगभग बेहोश ही हो गई थी। दिलावर अकेला इतने आदमियों से जूझ रहा था। मेरी सारी टुकड़ी में वही सबसे ताकतवर और हिम्मत का धनी था।

सातों आदमियों से हाथा-पाई करते हुए उसने एक बार फिर मटिल्डा को उठाकर खिड़की से भाग जाने का प्रयत्न किया। यह देख आज़ाद ने मुझे छोड़ दिया और दिलावर पर टूट पड़ा। जैसे ही आज़ाद ने कटार से दिलावर पर वार करना चाहा मैंने उसका हाथ पकड़ लिया। कटार आज़ाद के हाथ से छूटकर झन्नाती हुई दूर जा गिरी और वार खाली गया। लेकिन दिलावर के हाथ से मटिल्डा छुड़ा ही ली गई। बिजली की तरह तड़पकर दिलावर खिड़की से बाहर निकल गया और हमारे देखते-देखते रस्सी पकड़कर फुर्ती से नीचे की भयानक घाटी में उतर गया। आज़ाद ने क्रोधोन्मत्त होकर नीचे उतरते हुए दिलावर पर कटार फेंकी और गरज उठा—कमबख्त! दग़ाबाज़! दुश्मनों के साथ जा बैठा है।

रस्सी से फिसलते हुए दिलावर ने पैंतरा बदला और कटार उसके पास से सन्नाती हुई नीचे चली गई। वह भी नीचे उतर गया।

दिलावर को सही-सलामत भागते देख आज़ाद ने अन्दर आकर बड़बड़ाना शुरू किया—ऐसे खतरनाक आदमियों से खास तौर पर होशियार रहने की जरूरत है। दुश्मनों के साथ मिले हुए ऐसे बेवफा आदमी बहुत नुकसान पहुँचा सकते हैं। उस दग़ाबाज़ दिलावर का सिर जो भी मेरे पास लायेगा उसे मैं खुश कर दूँगा।

इससे यह स्पष्ट हो गया कि दिलावर पहले ठगों के साथ था।

अकस्मात् आज़ाद के इशारे पर उसके आदमियों ने मटिल्डा को उठाया और जिस दरवाजे से भीतर घुसे थे उसी की राह उसे लेकर चलते बने। असहाय मटिल्डा चीख उठी और मैं उसे छुड़ाने को जाऊँ उसके पहिले तो वे उसे लेकर अदृश्य भी हो गए।

मैं मारे क्रोध के आज़ाद पर टूट पड़ा। परन्तु वह भी वार बचाकर उसी दरवाजे की राह निकल गया और जाते-जाते बाहर से दरवाजा बन्द भी करता गया। मुझे बहुत गुस्सा आया। दरवाजे पर मैंने कई लातें जमाईं, हाथ से खटखटाया, मगर मेरे सारे प्रयत्न निष्फल हुए। पहाड़ी को काटकर बनाये हुए कमरे में मैं फिर से बन्द हो गया।

अब सूर्य का प्रकाश दिखाई पड़ने लगा था। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करूँ ? निरुद्देश्य कमरे में घूमता रहा। रात को जागरण और सुबह की मार-पीट के कारण थकावट महसूस होने लगी। मैं एक कुर्सी पर बैठ गया। पाँव पसारते ही मुझे नींद आ गई।

कुछ देर के बाद, खड़खड़ाहट होते ही, मैं जाग गया। जरा-सी आँख खोलकर देखा तो एक अजनबी को कमरे के गुप्त ताके में से कागजों का एक पुलिन्दा निकालते पाया। पुलिन्दों में से टटोलकर उसने एक महत्व का कागज निकाला और दूसरे सब कागजों को बाँधकर ज्यों-का-त्यों रख दिया। इधर-उधर देखकर उसने ताका बन्द किया।

बीच-बीच में वह मेरी ओर भी देखता जाता था। मैं नींद का ढोंग किये पड़ा था। ताका खोलने-बन्द करने की तरकीब मेरी समझ में आ गई। धीमी गति से वह आदमी मेरी ओर आया। मेरा चेहरा देखकर उसे विश्वास हो गया कि मैं गहरी नींद में सोया पड़ा हूँ। यह देख वह बड़ा प्रसन्न हुआ और कमरे से बाहर निकल गया। उसके जाने के बाद, यह विश्वास हो जाने पर कि दूसरा कोई नहीं आयेगा मैं उठ खड़ा हुआ। दरवाजे को भीतर से बन्द किया और उस रहस्यमय ताके की ओर चला। एक छोटी-सी कीली को दबाते ही दीवार खिसक गई और उसके स्थान पर खुला हुआ ताका सामने आ गया। भीतर से कागज का पुलिन्दा निकालकर मैं कुर्सी पर आकर बैठ गया।

कागज खोलते ही मैं अवाक् हो गया। ये भयंकर ठग, लोगों के गले दबाकर, सिर्फ मारने का धन्धा ही करते हैं, ऐसा सभी लोगों का खयाल था; परन्तु किसी ने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि इन ठगों का सम्बन्ध भारतीय राज्यों से ही नहीं; विदेशी राज्यों के साथ भी हो सकता है; और उनके साथ मिलकर ये राजनीतिक षड्यंत्र भी कर सकते हैं। अपने वास्तविक उद्देश्यों पर पर्दा डालने के ही लिए वे लोगों के गले घोंटा करते और फाँसी के फन्दे डाला करते थे।

७ : भग्न-हृदय

ठगों की यह टोली केवल दुष्वृत्ति से प्रेरित हो, ऐसी बात नहीं थी। कई पत्रों में उनकी उच्च नैतिक भावनाएँ इतने स्पष्ट रूप से अंकित हुई थीं कि वे किसी भी धार्मिक संस्था के लिए गौरव की बात हो सकती थीं। पिंढारों के महान नेता अमीर अली ने अपने एक पत्र में लिखा था : 'आपने मुझे जो उलहना दिया, वह सही है। लेकिन कई कारणों से बात काबू के बाहर हो गई है। लोगों के मुँह पर मिर्च का तोबड़ा बाँधना बहुत बुरी बात है, और मैं खुद इस बात को कबूल करता हूँ कि यह एक निहायत बुरी बात है। और मैं इस बात को भी मानता हूँ कि किसी औरत पर हाथ उठाना खुदा को अपने ऊपर हाथ उठाने का न्यौता देने के बराबर है। फिर भी, कभी-कभी गलतियाँ हो ही जाती हैं। आपको ऐसी गलतियों का खयाल करके अपनी मदद से हाथ नहीं खींचना चाहिए।'

एक दूसरे पत्र में लिखा था, 'अमुक महिला को मेरे आदमियों ने लूटा। वाकई यह काम बहुत बुरा हुआ था। मैं खुद ऐसा कभी नहीं चाहता। आपकी सूचना के अनुसार लूटा हुआ माल उस महिला को आज शाम के पहिले ही लौटा दिया जायगा। आप अब तकलीफ न उठायें।'

तीसरा पत्र देखा तो उसमें लिखी बात तो और भी हैरत में डालने-वाली थी : 'अगर रघुनाथराव अँग्रेजों से न मिलें तो क्या करें ? चारों ओर उनका अपमान हो रहा है। आजकल के नवयुवक भूल जाते हैं कि इसी वीर पुरुष ने अटक नदी में पेशवाओं के घोड़ों को पानी पिलाया था।'

चौथा पत्र इससे भी अधिक आश्चर्यजनक था : 'पाटील बुवा और नाना फड़नवीस को मिलाने की आपकी योजना बड़ी अच्छी है। दोनों अपनी-अपनी महत्वाकांक्षा को दबाकर अगर हिन्दुस्तान के हित के लिए एक हो जायें तो हिन्दुस्तान का उद्धार हो सकता है। लेकिन अगर

इसी ढंग से काम चलता रहा तो मुझे डर है कि पेशवाई नष्ट हो जायेगी और हम सब को अँग्रेजों का गुलाम होकर रहना पड़ेगा।'

इन पत्रों को पढ़कर मैं तो चकित रह गया। जैसा पत्रों में लिखा था ठीक वैसा ही हुआ था। इन ठगों में भला ऐसा कौन दूरन्देश था, जिसकी भविष्यवाणी इस क़दर सच हुई ?

मुझे देर से भ्रम हो रहा था कि कोई मुझे देख रहा है। इसलिए पढ़ते-पढ़ते मैं इधर-उधर देख लेता था, मगर कोई दिखाई नहीं देता था। हाथ के एक पत्र को नीचे रखते हुए हठात् मैंने उस जाली की ओर देखा। जाली में से एक आदमी मेरी ओर ताक रहा था। मेरी नजर पड़ते ही उसने जाली के पास की छोटी खिड़की खोली और भीतर चला आया।

मैं बुरे-से-बुरे परिणाम के लिए भी तैयार ही था।

'क्या आपने पत्र पढ़ लिये ?' उसने पूछा।

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया और लापरवाही से उसकी ओर देखने लगा।

'इसकी सजा क्या है, यह जानते हो ?'

उसके इतना कहते ही जो कुछ हुआ, वह तो मुझे ठीक से मालूम नहीं, पर मैं एकदम नीचे अन्धकार में उतरने लगा। मुझे लेकर कमरे का फर्श ही नीचे बैठा जा रहा था। फिर मेरे पाँव थमे और अँधेरा कुछ कम होने पर ऐसा लगा मानों मैं एक देवमन्दिर में पहुँच गया हूँ। उस मन्दिर में एक भयानक देवी की मूर्ति के सामने मैं खड़ा था। वह विशाल मूर्ति छह-सात आदमियों जितनी ऊँची और उतनी ही चौड़ी थी। मूर्ति की जीभ बाहर निकली हुई थी। उसके एक हाथ में बड़ी-सी तलवार और दूसरे हाथ में विशाल गदा थी। दूसरे दोनो हाथ दोनो जाँघों पर रखे हुए थे। नीचे की बैठक पर पाँव पसारे वह मूर्ति बैठी हुई मालूम पड़ती थी।

मैंने सोचा कि ज्वालामुखी पहाड़ के किसी भाग को इस प्रकार मूर्ति का रूप तो नहीं दे दिया गया है ?

मन्दिर विशाल था। एक बड़ा घंटा वहाँ लटक रहा था और पास ही एक बड़ा-सा डंका भी पड़ा हुआ था। हथौड़ी, फरसा, तलवार,

भाले, तीर-कमान, बख्तर, ढाल आदि शस्त्रास्त्र बड़ी संख्या में मन्दिर की दीवारों पर टँगे हुए थे। नये ढंग की बन्दूकें भी काफी तादाद में वहाँ जमा थीं। इतने हथियार थे जो किसी छोटी सेना के लिए काफी होते। यह देख मेरे दिल में सवाल पैदा हुआ कि यह मन्दिर है या शस्त्रागार!

मन्दिर में मैं अकेला ही था। मेरे खयाल में यह मन्दिर उस विशाल इमारत का एक भाग था, जो किसी पहाड़ की बड़ी चोटी पर बनाई गई थी और जिसका ठग-नेता अपने निवास-स्थान के रूप में उपयोग करते थे। इसके ऊपर के भाग में गुप्त दस्तावेज और महत्वपूर्ण काग़ज़-पत्र रखे हुए थे। नीचे मन्दिर और शस्त्रागार था। समीप ही कहीं खजाना और अन्न-भंडार भी होना चाहिए। अपनी प्राकृतिक स्थिति के कारण यह इतना सुरक्षित था कि इसकी रक्षा की कोई आवश्यकता नहीं प्रतीत होती थी। दुश्मनों की असंख्य सेना भी इन लोगों का कुछ नहीं बिगाड़ सकती थी।

उस मूर्ति को मैंने दूर से भी देखा और समीप से भी; और मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि यह यांत्रिक करामात का पुतला होना चाहिए।

मैं मूर्ति को देख रहा था, इतने में पीछे से किसी के आने की आहट हुई। मुड़कर देखा तो आयशा खड़ी थी। दीवार ज्यों-की-त्यों थी। एक भी दरवाज़ा या आने-जाने का कोई रास्ता मुझे उसमें दिखाई नहीं दिया। तो आयशा आई किधर से? क्या जिस तरह मैं आया उसी तरह वह भी तो नहीं आई?

मैंने उसे आदरपूर्वक सलाम किया।

'आखिर आप नहीं ही छूट सके?' आयशा ने पूछा।

आसपास की उस भयानकता में आयशा का सौन्दर्य और भी फूटा पड़ता था।

'नहीं; लेकिन कोशिश जारी है!' मैंने कहा।

आयशा ने थोड़ी देर के लिए कोई उत्तर नहीं दिया। वह सोच में पड़ गई। कुछ देर के बाद उसने मुझसे पूछा—आप मटिल्डा को तो जानते ही होंगे?

'जी हाँ ! जानता हूँ।'

'कोई अँग्रेज औरत किसी हिन्दुस्तानी के साथ शादी करे तो क्या आप पसन्द करेंगे ?' उसने पूछा।

उत्तर के लिए कुछ सोचने की जरूरत न थी। मैंने झट से कहा—कभी नहीं।

'तो क्या आप मटिल्डा को समझा सकेंगे ? वह किसी हिन्दुस्तानी के प्यार में पड़ गई है।' उसने कहा।

'समरसिंह कहाँ है ?' इतनी घटनाओं के घट जाने के बाद भी मैंने उसे कहीं देखा नहीं, इसलिए पूछ बैठा।

इस नाम को सुनते ही आयशा के मुख के भाव बदल गए। उसके सुन्दर चेहरे पर लाली छा गई और वह दमकने लगा। उसकी लम्बी कजरारी आँखों में आन्तरिक उल्लास की आभा फूट पड़ी। चेहरा प्रसन्न मुस्कराहट से खिल गया।

'वह तो भरतपुर गये हैं।' उसने जवाब दिया।

'क्यों ?'

'राज्य के लिए लड़ाई चल रही है। आपकी सेना भी तो उधर ही गई है। उनको बुलावा आया था।' आयशा ने कहा।

'समरसिंह को इस सबसे क्या मतलब ?' मैंने अधिक जानकारी पाने की गरज से पूछा।

'वह तो सच्चाई के साथी हैं। जहाँ भी सच्चाई को खतरा होता है समरसिंह वहीं पहुँच जाते हैं।' आयशा ने प्रशंसा-भरी वाणी में कहा।

'तो फिर ऐसे प्रपंचों में वह क्यों शामिल होते हैं ? साधु होकर गंगा के किनारे क्यों नहीं बैठ जाते ?'

आयशा ने एक लम्बी साँस ली। उसके मुँह पर निराशा की छाया फैल गई।

'साधु तो वह हैं ही। रहते भी गंगा के किनारे ही हैं।' उसने कहा।

'इसमें आप इतनी नाराज और दुःखी क्यों हैं ?' मैंने पूछा।

'कई औरतें इस बात को जानती नहीं, और जानती हैं तो मानती नहीं, और मानती हैं तो उनका मोह नहीं छोड़ सकतीं। बस इसी लिए दुःखी हूँ।' आयशा ने अपने शोक का कारण बतला दिया।

अगर वही युवक समरसिंह है तो कहना होगा उसका सौन्दर्य गजब का है। फिर अपने जीवन-प्रवाह को साधुत्व की शुष्क बालू में वह क्यों बहा रहा है? आयशा का नाराज होना आश्चर्य की बात नहीं थी। उसके कथन में मुझे एक भग्न-हृदय का आर्त स्वर सुनाई दे रहा था।

'बताइए अब क्या सोच रहे हैं?' मुझे सोच में पड़ा देख वह मुस्कराकर बोली, 'मैंने आपसे पहले जो कहा वह याद है न—मटिल्डा को समझाने की बात?'

मैं चौंक पड़ा। क्या मटिल्डा समरसिंह को चाहती है? क्या एक अँग्रेज बाला किसी काले भारतीय ठग से प्यार कर सकती है?'

'आपकी यही शर्त है न? यहाँ से मुक्त होने के लिए यदि केवल इतनी-सी शर्त हो तो मैं सहर्ष तैयार हूँ।' मैंने कहा।

'लेकिन इसमें जान का जोखिम भी है। अभी मटिल्डा आजाद के कब्जे में है।' आयशा ने कहा।

आजाद मेरे सामने ही उसे किस तरह उठा ले गया, यह बात मुझे पुनः याद हो आई।

'मगर आजाद तो आपको चाहता है न?' मैंने पूछा।

'लेकिन वह इस बात को भी जानता है कि मैं साध्वी हूँ और किसी के साथ शादी नहीं कर सकती।' उसका यह उत्तर सुनकर मैं पुनः चौंक पड़ा।

बात क्या है? ऐसी सुन्दरी को क्या अकेले रहकर जिन्दगी गुजारनी पड़ेगी?

'आप कह क्या रही हैं? मेरी समझ में तो कुछ नहीं आ रहा। समरसिंह साधु है और आप साध्वी हैं और दोनों ही अविवाहित रहकर जीवन बितायेंगे?'

'जी हाँ, जैसा आप कहते हैं बात तो वैसी ही है। हमें हमारा धर्म ऐसा करने को बाध्य करता है।' आयशा ने कहा।

'मगर आज़ाद तो शादी करना चाहता है, सो कैसे ?' मैंने पूछा।

'सब के लिए शादी की मनाही नहीं है। धर्म के रहस्य को जिसने समझ लिया, वह शादी नहीं कर सकता, उसे शादी से मरहूम रहना पड़ता है। मैं और समरसिंह दोनो ही अपने धर्म को ठीक-ठीक जानते हैं। इसी लिए दुनियवी सुख-चैन से नाता तोड़ना हमारा फर्ज हो जाता है।' आयशा ने कहा।

मैं यह सुनकर स्तब्ध हो उठा। इन लोगों का धर्म कैसा ? धर्म का रहस्य कैसा ? ठग-विद्या और धर्म का सम्बन्ध ही क्या ! जिस सुन्दरी के चेहरे पर समरसिंह के नामोच्चारण-मात्र से लाली दौड़ जाती है वह उसके सहचार्य के बिना कैसे रह सकेगी ?

इतने में आयशा हठात् चौंक पड़ी और बोली—साहब, जल्दी कीजिए। आपकी आँखों पर पट्टियाँ बाँधनी होंगी। उसके बिना आप इधर से बाहर नहीं जा सकते।

और मुझे जवाब का मौका दिये बिना उसने एक रेशमी रूमाल निकालकर मेरी आँखों पर बाँध दिया।

रूमाल बाँधकर मुझे मानो बिलकुल अन्धा बना दिया। फिर उसने मुझे अपना हाथ थमा दिया। उस हाथ को थामे उसके साथ-साथ, उसके कहने के अनुसार, मैं चल पड़ा। अत्यन्त ऊबड़-खाबड़ जगहों में होती हुई आयशा मुझे चलाती रही। अन्धे की तरह चलते-चलाते मैं बिलकुल तंग आ गया था।

सहसा उसने मुझे बैठ जाने का इशारा किया और मेरा हाथ दबाया। मैं उसकी सूचना के अनुसार बैठ गया और तुरन्त मेरी आँखों पर की पट्टी हटा दी गई। बँधे रहने के कारण दृष्टि इतनी धुँधली हो गई थी कि कुछ देर तक तो मैं देख ही नहीं सका।

धूप तेज थी। एक पहाड़ के ऊपर की टेकरियों की छाया में हम बैठे थे। टेकरियों ने मानो हमें चारों ओर से घेर लिया था। मैं आयशा से कुछ पूछने जा ही रहा था कि उसने मुझे चुप रहने का इशारा किया। उसके मुख पर गहरी चिन्ता व्याप्त हो गई थी।

हठात् हमारी पहाड़ी के समीप से कई आदमियों के गुजरने की आवाज़ आती सुनाई दी। मगर उन्हें न हम देख सकते थे और न वे हमें। हाँ, ज़रा-सी भी आवाज़ होने पर बाहरवाले फौरन जान जाते कि हम यहाँ बैठे हैं। आयशा ने मुझे चुप रहने को क्यों कहा—यह बात अब मेरी समझ में आई। मुझे लगा कि कोई टोली हमारी तलाश में निकली है। उनके और हमारे बीच में सिर्फ एक छोटी-सी टेकरी थी। भूल से भी यदि किसी की नज़र पड़ जाती तो पकड़ लिये जाने में कोई सन्देह न था।

'वे इधर ही कहीं होने चाहिए।' टोली में से किसी ने कहा।

मेरे तो होश फाख्ता हो गए। आयशा का चेहरा जड़वत् हो गया। मुँह को देखकर उसके मन की थाह पाना मुश्किल ही था। बिलकुल स्थिर, बिना हिले-डुले सूनी नजरों से देखती हुई वह मेरे पास सिमटकर बैठी थी। मगर उसके मुँह पर भय का लेश भी न था।

'अरे भाई, तुझे शक कैसे हो गया? वह गोरा मन्दिर में उतरा या किसी दूसरी जगह, इस बात का इतमीनान कैसे हो?' किसी दूसरे आदमी ने पहलेवाले आदमी की बात का जवाब देते हुए कहा, 'मन्दिर के चारों ओर तो हमीं पहरे पर थे। और मान लो कि मन्दिर में ही उतरा तो वहाँ से आयशा उसे भगाकर कैसे ले जा सकती है?'

'मगर दो आदमी भागते दीखे तो थे।' पहला बोला।

'तभी तो कहता हूँ कि भ्रम हुआ है। यों कहने के साथ ही हम दौड़े तो आये हैं। छिपने की यहाँ कोई जगह नहीं है। फिर किधर जा सकते हैं?' दूसरे आदमी ने कहा।

'जब तक पकड़े नहीं जाते, यही मानना होगा कि भ्रम हुआ। पर आओ, अब थोड़ी देर यहीं आराम कर लें।' तीसरे ने कहा।

आयशा की आँखें बड़ी होती दिखाई दीं। मुझे भी लगा कि अगर इन लोगों ने यहाँ आराम किया तो हम जरूर पकड़ जायेंगे।

'यहाँ, कड़ी धूप में, आराम करने के लिए कोई जगह भी है?' टोली में से किसी ने हँसते-हँसते कहा।

'पीछे जो टेकरी है उसकी छाया में बैठेंगे।' तीसरे आदमी ने जवाब दिया।

आयशा धीरे-से अपनी जगह से उठी और टेकरियों के बीच ज एक गलियारा-सा-बना हुआ था, उसमें जाकर खड़ी हो गई। मैं भी उसके साथ-साथ उधर गया। फौरन ही आयशा ने अपनी कमर में से एक कटार खींच निकाली।

मेरे पास तो कोई हथियार था नहीं। इसलिए खाली हाथ ही, जो पड़े उसका सामना करने को तैयार हुआ। क्या करना होगा, किस को मारना होगा, क्यों मारना होगा, इन सब प्रश्नों से मुझे कोई मतलब न था। मैं तो केवल इतना जानता था कि मुझे आयशा की सब संयोगों में मदद करनी है। कटार लेकर खड़ी हुई आयशा की उस भयानक सौन्दर्य मूर्ति को देखकर चकित होता हुआ मैं सतर्क खड़ा था।

मगर आयशा को कटार का उपयोग करने और मुझे अपने हाथ दिखाने की जरूरत ही नहीं पड़ी। टोली में से किसी ने कहा—यहाँ बैठ रहने के बदले अपने स्थान पर लौट चलना अच्छा। थोड़ी धूप जरूर लगेगी, परन्तु अड्डे पर पहुँच भी जायेंगे। चलो, चलें।

धीमे-धीमे वे लोग टेकरियों के पास से होते हुए गुजरने लगे। आयशा के चेहरे की कठोरता और सिकुड़न दूर होती गई और जब यह विश्वास हो गया कि पीछा करनेवाले चले गए हैं तो उसका सुन्दर मुखड़ा मुस्कराहट से खिल गया।

'अब आपको आराम की जरूरत है। चलिए!' कहकर उसने मुझे आगे किया। ऐसी धूप में इस पहाड़ पर, वह मुझे कहाँ और कैसे आराम देगी, यह बात बहुत प्रयत्न करने पर भी मेरी समझ में न आई। फिर भी उसके साथ जाने के सिवाय और कोई चारा न था। ऊँची-नीची जगहों पर चढ़ते-उतरते हम एक झाड़ी के पास आये। झाड़ी में घुसते ही पता चला कि उसमें एक झोपड़ी बनी है। यह झोपड़ी झाड़ियों के साथ मिल जाने से दूर से दिखाई नहीं देती थी। समीप जाकर आयशा ने दरवाजा खटखटाया।

'कौन ?' भीतर से किसी ने पुकारा और तुरन्त दरवाजा खुल गया। दरवाजा खोलनेवाले को देखकर मैं और आयशा दोनो ही स्तब्ध रह गए। दरवाजा आज़ाद ने खोला था।

आज़ाद को भी हमारी ही तरह आश्चर्य हुआ। कुछ देर तो वह भी स्तब्ध खड़ा देखता रहा। आयशा ने पूछा—तुलसी कहाँ गई है ? भीतर नहीं है क्या ?'

आज़ाद ने कहा—मैंने उसे बाहर भेजा है; लौटती ही होगी। अन्दर आइए न !

आज़ाद के साथ आज सवेरे जो मारपीट हुई थी, वह मुझे याद हो आई। आराम करने के लिए आयशा मुझे यहाँ ले आई थी; परन्तु आज़ाद की उपस्थिति में आराम की आशा दुराशा ही थी। मैं आज़ाद के साथ पुनः जोर-आजमाई के लिए मन-ही-मन तैयार हुआ।

इस बीच आयशा ने बाहर रखी चारपाइयों में से एक को बिछा दिया और मुझे बैठने को कहा। मैं उसके आदेशानुसार बैठ गया।

'क्या आप भीतर नहीं आयेंगे ?' आज़ाद ने मुझसे पूछा।

'नहीं, यहीं ठीक हूँ; आराम से लेटा हूँ।' मैंने उत्तर दिया।

८ : छल-कपट

मैं चारपाई पर लेटा रहा। आज़ाद झोपड़ी में से बाहर निकल आया और मेरे पास एक दूसरी चारपाई लगाकर बैठ गया। आयशा इधर-उधर घूमने लगी। यह स्थान उसका परिचित मालूम होता था।

थोड़ी देर में, झाड़ी में से, एक कद्दावर स्त्री सिर पर कुछ लेकर आती दिखाई दी। आयशा ने उसे दूर से ही देखकर पुकारा—तुलसी, कहाँ घूम रही है ? तेरे घर हम मेहमान आये हैं और तू भागती फिरती है।

'ओहो बहन ! आप कैसे ?' तुलसी नज़दीक आकर आयशा से लिपट गई। 'बहुत अच्छा ! बहुत ही अच्छा ! आप मेरी मेहमान हुईं,

यह तो मेरी खुशनसीबी। फल लाने गई थी। सबके लिए काफी होंगे। आइए बहनजी, भीतर आइए।'

तुलसी आयशा को भीतर ले गई। दूसरे ही क्षण वह बाहर आई और हरे पत्तों के गोल और स्वच्छ दोने और पत्तल हमारे सामने रख उनमें ताजे, जायकेदार फल, आटे का बना कोई मीठा पदार्थ (हलुवा) और थोड़ा मठा परोस दिया।

'शरमाइएगा नहीं साहब।' तुलसी ने मुझे सम्बोधित करते हुए कहा। उत्तर में मैं थोड़ा मुस्कराया।

आजाद ने तुलसी से पूछा—तुलसी, क्या इन साहब को तू पहचानती है?

'मैं कहाँ से पहचानूँगी? आयशा बहिन के साथ आये हैं इसलिए यह भी हमारे मेहमान हैं।' उसने जवाब दिया।

ग्रामीण स्त्री का ऐसा उदार और कोमल हृदय देखकर मैं प्रसन्न हो उठा। गरीबों का दिल यदि धनिकों को मिल जाये तो दुनिया स्वर्ग बन सकती है।

आजाद थोड़ी देर चुप बैठा रहा, फिर उसने पूछा—गम्भीर कब आयेगा?

'सो मैं क्या जानूँ?' तुलसी ने उत्तर दिया। 'बहुत करके समरसिंह के साथ ही आयेगा। आज एक आदमी ने बताया कि भरतपुर का काम हो गया है और समरसिंह नेपाल गये हैं।

आजाद का दिमाग खूब जोरों से काम करने लगा है, ऐसा मुझे प्रतीत हुआ। समरसिंह के नेपाल जाने का प्रयोजन मेरी समझ में नहीं आया। आजाद भी, मेरा खयाल है, उसी के बारे में सोच रहा था।

खाने के बाद मैं फिर आराम करने को लेट गया। नींद मुझे जोरों से आ रही थी। आयशा ने बाहर आकर मुझसे कहा—अब आप थोड़ी देर आराम कर लीजिए।

आजाद की भृकुटि तन गई। परन्तु मैंने उसकी परवाह न की और निश्चिन्त होकर लेट गया।

थोड़ी देर में आज़ाद ने धीरे से मुझसे कहा—स्लीमान साहब, मैं आपसे कुछ बातें करना चाहता हूँ।

मैंने कहा—बहुत खुशी से। मगर आपके अभी तक के व्यवहार से लगता है कि हमारी बातें अधिक देर तक चलेंगी नहीं।

आज़ाद ने झूठी हँसी हँसते हुए कहा—यही तो आप भूल करते हैं। वैसे पक्षियों में कौआ, जानवरों में सियार, और मनुष्यों में अँग्रेज शायद ही भूल करते हैं।....मगर समरसिंह की दोस्ती में आप भूले हुए हैं। उसके-जैसे खतरनाक आदमी से सावधान रहिएगा।

तभी एक लड़का तीर-कमान से खेलता हुआ चारपाई के पास से गुज़रा। उसे देखकर आज़ाद थोड़ा चौंक पड़ा।

मैंने कहा—मैं तो समरसिंह को पहचानता भी नहीं और न आपको ही पहचानता हूँ। समरसिंह मेरा दोस्त नहीं है, और उसकी दोस्ती की मुझे परवाह भी नहीं है।

'आपकी इस बात को भला कौन मानेगा? इतने समय से आप उसके साथ घूमते हैं। उसके साथ रहने से ही आप अभी तक बचे हुए हैं; फिर भी कहते हैं कि आप उसे नहीं पहचानते! मैं आपकी यह बात कैसे मान लूँ?' आज़ाद ने कहा।

अब मुझे विश्वास हो गया कि उस शेरवाले युवक का ही नाम समरसिंह है। जिसके नाम से लोग काँपते हैं वह सुमरा ठग वही है। मैंने कहा—आप मानें या न मानें, मगर मैं तो बिलकुल सच कहता हूँ।

आज़ाद ने कहा—आप थोड़ी देर आराम कर लीजिए। बाद में मैं बातें करूँगा।

आराम की मुझे जरूरत थी ही, मैं तत्काल सो गया।

कुछ ऊँचे स्वर में होती हुई बातचीत की ओर मेरा ध्यान गया और मैं जाग उठा।

मुझे जागते देख आज़ाद ने एक नवागन्तुक व्यक्ति से कहा—गम्भीर, मैं तुझे आज के दिन की मोहलत देता हूँ। इस बीच अगर तू नहीं बताएगा कि समरसिंह कहाँ गया है तो तेरे बुरे हाल होंगे।

गम्भीर खासा कद्दावर पुरुष था। उसकी देह का रंग श्याम, मूछें बड़ी और आँखें लाल थीं जो उसके स्वरूप को भयंकर बना रही थीं।

'मोहलत की कोई जरूरत नहीं; जिस बात को मैं जानता ही नहीं उसे कैसे बता सकता हूँ! आप नाहक गुस्सा हो रहे हैं। मैं समरसिंह के साथ था जरूर, मगर उन्होंने मुझे वापस भेज दिया और सो भी बीच रास्ते में से। नहीं तो इतनी जल्दी मैं लौट ही कैसे सकता था? इतने पर भी अगर आप कहते हैं कि मैं सब-कुछ जानता हूँ तो आपकी इस बात को मान लेने के सिवाय मेरे आगे और कोई चारा नहीं है।' गम्भीर ने उत्तर दिया।

'अच्छी बात है, जाओ। अभी भीतर बैठो।' आज़ाद का हुक्म पाकर गम्भीर झोपड़ी में चला गया। उसके जाने के बाद आज़ाद ने मुझे बताया कि अपने काम में सफलता पाने के लिए यह जरूरी है कि ऐसे बेढंगे ठगों को मुझे पहले पकड़ना चाहिए।

मैंने कहा—मैं इसी काम के लिए तो नियुक्त हुआ हूँ।

'मगर दोस्ती तो आपने सुमरा ठग के साथ जोड़ी है।' उसने कहा।

'किसी के साथ मेरी दोस्ती नहीं है। मैं तो अपना काम करना चाहता हूँ।'

'अगर आप अपना काम ही करना चाहते हैं तो सुमरा को पकड़िए।'

'जब मैं कर सकूँगा तो वह भी करूँगा। उसी का तो मैं रास्ता देख रहा हूँ।'

'कहिए तो मैं रास्ता दिखा दूँ?'

'खुशी से। आपका बताया रास्ता मैं अख्तियार करूँगा।'

ऐसा लगा कि सुमरा के साथ आज़ाद की शत्रुता होने से मुझे बहुत कुछ जानने को मिलेगा। फिर भी बात बढ़ाने के हेतु मैंने कहा—मगर ऐसा मैंने सुना है कि आपका नाम भी सुमरा से कम भयानक नहीं है।

सुमरा के साथ अपनी तुलना होते देख आज़ाद के चेहरे पर प्रसन्नता छा गई। मैंने इस बात से लाभ उठाने का निश्चय किया।

थोड़ी देर के बाद चारों ओर नजर डालते हुए आजाद ने बिलकुल धीरे से मुझसे कहा—अगर मैं सुमरा को पकड़ा दूँ, तो ?

ठीक उसी समय हमारी चारपाई के पास के पेड़ की डाली पर खड़खड़ाहट हुई। चौंककर आजाद ने ऊपर देखा तो तीर-कमान से खेलता हुआ वह लड़का लापरवाही से एक डाली से दूसरी डाली पर जाता दिखाई दिया। उसके व्यवहार से लगता था मानो हमारी बातों में उसे कोई दिलचस्पी ही नहीं थी।

लेकिन आजाद न जाने क्यों चिढ़कर बोला—बदमाश ! नीचे उतर और भाग यहाँ से। सिर पर ही क्यों चढ़ा हुआ है ? क्या खेलने के लिए कोई और जगह तुझे नहीं मिली ? उतर जल्दी नीचे !

लड़का हुक्म सुनते ही बड़ी फुर्ती से नीचे उतर आया। उसके मुँह पर निर्दोषिता छायी हुई थी।

'पेड़ पर मेरा घोंसला है, उधर खेलने जाता था। मुझे पिताजी ने यह चीज दी है, इसी को रख रहा था।' इतना कहकर उसने अपनी मुट्ठी में बन्द किसी चमकती हुई चीज को दिखाया। मैंने उस चीज को तुरन्त पहचान लिया। वह था वही हीरा—चन्द्रिका।

आजाद लपककर उठा और लड़के को पकड़ने दौड़ा। चालाक लड़का झाड़ी में किधर छिप गया यह मालूम ही न हुआ, और आजाद चारों ओर देख-भालकर वापस मेरे पास आ बैठा। उसका चेहरा गुस्से से तमतमा रहा था।

'मेरे और सुमरा के बीच सबसे पहिले इस हीरे को ही लेकर झगड़ा हुआ। कितनी चालाकी से हमने यह हीरा पाया था, इसे सुनकर आपको ताज्जुब होगा। मगर सुमरा का लक्ष्य अच्छी-से-अच्छी चीज को अपनी बना लेने की ओर ही रहता है।' आजाद ने कहा।

'सिर्फ हीरे को लेकर ही आप झगड़ पड़े ? इतनी छोटी चीजों के बारे में अगर झगड़ेंगे तो आपकी संस्था टूट जायेगी।'

'साहब, यह हीरा मामूली नहीं है।' आजाद ने व्यग्र होकर कहा। 'अगर इतनी-सी बात होती तो कोई बाधा नहीं थी, मगर सुमरा इतने

से रुका नहीं। मेरे हरेक प्रयत्न में वह बीच में आ कूदता है और मुझे मिलनेवाली चीजों को छीन लेता है। आप ही बताइए मैं कब तक सहूँ ?'

'आप सभी चीजों का बराबर बँटवारा कर लीजिए।' मैंने सलाह दी।

'बँटवारे-जैसी चीज हो तब न ?'

'ऐसी कौन-सी चीजें हैं जिनका बँटवारा नहीं हो सकता ?'

आज़ाद फीकी हँसी हँसकर बोला—मैं आपको क्या बताऊँ, साहब ? सुमरा ने तो मेरी आयशा को भी छीन लिया और उस गोरी मेम को भी। अब तो मेरी जान ही क्यों न जाये, मगर सुमरा को उन लोगों के साथ चैन से रहने नहीं दूँगा।

'अभी तो आयशा और मटिल्डा दोनो ही आपके कब्जे में हैं, फिर आपको चिन्ता कैसी ?'

'यही तो आप भूलते हैं। मेरी मुश्किल यह है कि सुमरा क्या नहीं कर सकता ! आज आयशा और मटिल्डा दोनो ही जरूर मेरे कब्जे में हैं, मगर सुमरा ने उन दोनो पर न जाने क्या मोहिनी डाली है कि वे दोनो उसके पीछे पागल हैं।' आज़ाद ने कहा।

'तो फिर आप क्या कर सकते हैं ? उन युवतियों की मरजी के खिलाफ़ आपका क्या बस चलेगा ?' मैंने पूछा।

आज़ाद ने आँखें सिकोड़कर मुझसे कहा—मगर मैं आसानी से माननेवाला आदमी नहीं हूँ। आयशा भले ही मानती रहे कि दुनिया में समरसिंह के सिवा और कोई पराक्रमी नहीं; और मटिल्डा भी मानती रहे कि समरसिंह-जैसा स्वरूपवान दूसरा नहीं। परन्तु मेरी भी जिद है कि मैं उन दोनो छोकरियों के इस भ्रम को तोड़ डालूँगा। उन्होंने मुझे समझा क्या है ? अपनी इसी जिद के कारण हमने 'चन्द्रिका' की चोरी की, इसी जिद के कारण हम मटिल्डा को उठाकर लाये। मगर सुमरा ने हर बार मेरी मेहनत पर पानी फेर दिया और हर बार अपने को आगे रखा। मैंने एक प्रयत्न और किया, मगर उसमें भी मुझे हार माननी पड़ी।

'वह कौन-सा प्रयत्न किया था ?' आज़ाद बात करने को उत्सुक था और मैं ज्यादा-से-ज्यादा जानना चाहता था। लेकिन कुछ मुस्कराकर उसने यह बात बताने से पहले इनकार कर दिया। मैंने फिर आग्रह किया।

अन्त में आग्रह से परास्त होकर उसने कहा—देखिए, मैं आपकी दोस्ती चाहता हूँ, पर डर है कि अपनी आखिरी कोशिश की बात सुनाकर आपको कहीं खो न दूँ।

मैंने उसे धीरज बँधाया और कहा कि तुम्हारी परिस्थिति से मैं अनुचित लाभ उठाना नहीं चाहूँगा। उसे मेरे कथन पर विश्वास हो गया और वह बोला— हमारी टोली को जीतने के लिए ही आप नियुक्त किये गए हैं। इसलिए मैंने बीड़ा उठाया है कि आपको जीवित पकड़ूँगा और भवानी के आगे आपका बलिदान दूँगा। अगर आप जिन्दा न पकड़े गए तो आपका सिर काटकर माता को समर्पित कर दूँगा। मैं अपने इस प्रयत्न में सफल हो जाता, मगर सुमरा ने बीच में ही भाँजी मार दी और आपको बचा लिया।

उसकी यह बात सुनकर मेरे रोंगटे खड़े हो गए। मेरे सिर के लिए ठगों ने ऐसी शर्त लगा रखी है इसका तो मुझे खयाल भी नहीं था। अभी पता चला कि मैं कैसे भयानक संयोग में फँस गया था। सुमरा के लिए मेरे दिल में कृतज्ञता की भावना पैदा हुई। हर प्रसंग में सुमरा मुझ-जैसे दुश्मन को क्यों बचाता रहा, इसका रहस्य अब मेरी समझ में आया।

'मगर अब मैं बाजी बदलना चाहता हूँ। आपकी हत्या करने से मुझे तनिक भी लाभ न होगा। हाँ, अगर आप मुझे मटिल्डा दिलवा दें तो मैं सुमरा को कैद करा सकता हूँ।' आज़ाद ने कुछ सोचकर कहा।

किसी तरह की शर्त करने का तो मेरा इरादा नहीं था। मटिल्डा अंग्रेज लड़की थी इसलिए उसे सुमरा से दूर करने को आयशा ने स्त्री-सुलभ ईर्ष्या के वशीभूत होकर मेरी सहायता माँगी थी। उसी मटिल्डा को प्राप्त करने के हेतु आज़ाद की कामुकता मेरी दोस्ती माँग रही थी।

मुझे विचार आया कि स्त्री-जाति दुनिया के क्रम में कितना परिवर्तन कर सकती है।

अपने उद्देश्य को देखते हुए आज़ाद की कथित मैत्री से जितना लाभ हो सकता था, उसे छोड़ने को मैं तैयार न था। मैंने उत्तर दिया—मैं वचन-बद्ध होना नहीं चाहता; फिर भी यदि आप सुमरा को पकड़वा दें तो मटिल्डा को समझाने का मैं प्रयत्न करूँगा।

वैसे मुझे यह बिलकुल पसन्द नहीं था कि मटिल्डा-जैसी अँग्रेज कुमारी किसी काले आदमी से शादी करे। फिर भी संयोग किधर ले जाते हैं, यह कहना मुश्किल था। हो सकता है कि मटिल्डा को मैं आज़ाद और सुमरा, दोनों के कब्जे से छुड़ा सकूँ और इसी लोभ के कारण मैंने वचन नहीं दिया, यद्यपि वचन देने का दिखावा ज़रूर किया। ऐसा करके मैंने आज़ाद को ठगा या स्वयं ठगा गया, यह बताना मुश्किल है।

६ : आज़ाद की सोहबत में

मेरे और आज़ाद के बीच इस तरह की बहुत-सी बातें हुईं। मटिल्डा या आयशा दोनों में से किसी की भी खातिर वह सुमरा को पकड़वा देने को तैयार था। मैंने उसे सारी ठग टोली को बिखेरने के सम्बन्ध में भी बहुत प्रलोभन दिये, किन्तु वह सुमरा के सिवाय और किसी भी ठग को पकड़वाने के लिए तैयार न था। संस्था के प्रति उसकी यह वफादारी देखकर मुझे आश्चर्य हुआ।

दूसरे दिन सवेरे मैं इस विचित्र टोली की कैद से छूटनेवाला था। आज़ाद ने ठग लोगों की बस्ती के इस पहाड़ी प्रदेश में से ब्रिटिश सीमा में मुझे छोड़ आने का वचन दिया था। उसके अनुसार हम दोनों सवेरे चलने को तैयार हुए। मगर आयशा से बिना मिले जाना अशिष्टता थी, इसलिए मैंने उससे मिलना चाहा। हम झोपड़ी की ओर गये। आयशा को बड़ा आश्चर्य हुआ। एकाध सप्ताह और रहने का उसने

आग्रह किया। मगर ठग लोगों की मेहमा नवाजी से मैं तंग आ गया था, इसलिए मैंने मना कर दिया। आखिर में उसने कहा—अगर आप जाना ही चाहते हैं तो मैं गम्भीर को साथ में किये देती हूँ।

आज़ाद ने वक्र-दृष्टि से आयशा की ओर देखा। उसकी आँखों में क्रोध था। वह बोला—मैं साहब का खून करने नहीं जा रहा हूँ। अगर उनको मेरा डर ही है तो वह गम्भीर को साथ ले सकते हैं। मगर ऐसे दस गम्भीर साथ होने पर भी अगर मैं चाहूँ तो इनका खून कर सकता हूँ।

मैंने आयशा को आश्वासन दिया कि किसी भी संयोग में मुझे किसी की जरूरत नहीं पड़ेगी।

'तो ठीक है आप जाइए। फिर मिलेंगे।' आयशा बोली और आज़ाद की ओर मुड़कर उसने कहा, 'आज़ाद, आप यह न भूलें कि साहब मेरी अमानत हैं।'

आज़ाद ने उत्तर नहीं दिया और हम दोनो चल पड़े। कुछ देर में पहाड़ियाँ चढ़ते-उतरते हम समतल जमीन पर आ पहुँचे। पास में एक छोटा शिवालय था। वहीं एक आदमी दो अच्छे तेज घोड़े लिये खड़ा था। देखते ही वह हमारे पास आया और हम दोनो घोड़ो पर सवार हो गए।

कुछ देर तक हम दोनो में से कोई कुछ न बोला। दुलकी चाल से घोड़े चल रहे थे। थोड़ा समय बीतने के बाद आज़ाद ने मुझसे पूछा—स्लीमान साहब, जानते हैं न कि इस समय आप अकेले हैं?

'जरूर जानता हूँ। अकेला रहना मेरे लिए साधारण बात है। लेकिन आप अकेले हैं, इसलिए डर तो नहीं लगता न? परन्तु इत्मीनान रखिए, मैं पीठ पीछे वार नहीं करूँगा।' जो बात वह मुझसे कहना चाहता था वही मैंने उससे कह दी।

आज़ाद हँसा—आप गोरे लोग बहुत बड़प्पन हाँकते हैं, क्यों? कई बार तो इसी लिए आपकी जीत हो जाती है। अब जरा देखिए कि कौन डरता है।

इतना कहकर उसने कुछ अजीब ढंग से ताली बजाई। ताली गूँज उठी और देखते-देखते क़रीब पच्चीस हथियारधारी आदमी हमारे सामने आकर खड़े हो गए।

मुझे आश्चर्य हुआ। ऐसे निर्जन स्थान में इतने आदमी कहाँ से फूट पड़े, यह मेरी समझ में नहीं आया। मुझे थोड़ा भय भी हुआ। अगर आज़ाद यहाँ मेरा खून कर ही डाले?

'कहिए साहब! आपको बन्धन में रखूँ या खत्म करूँ?' ठहाका मारकर वह बोला। अन्तिम समय आया जान मैं बिलकुल लापरवाह हो गया और अकड़कर बोला—आप दोनो में से एक भी नहीं कर सकते।

तब उसने कहा कि खून करने का उसका भी इरादा नहीं था। वह तो सिर्फ अपनी ताकत और हुकूमत का मुझे परिचय देना चाहता था। यह मैं भी जानता था कि हिन्दुस्तान में शायद ही कोई ऐसी जगह हो जहाँ से ठग लोगों का सरदार एक पल में लोगों को इकट्ठा न कर सके। उसने आये हुए लोगों को चले जाने का हुक्म दिया। वे लोग देखते-ही-देखते में अदृश्य हो गए। बिखरती हुई टोली में से एक आदमी की पीठ की ओर आज़ाद की नज़र गई और न जाने क्यों उसने घोड़े को एड़ लगाई। छलाँग मारकर उसने उस आदमी की गरदन को जा पकड़ा। उसका मुँह देखने पर मैंने भी उसे पहचाना। अरे, यह तो वही झोपड़ीवाला गम्भीर था।

'क्यों रे बदमाश! हमारे पीछे-पीछे आता था? आयशा ने भेजा है, क्यों? साहब को मैं मारूँगा ऐसा सोचकर आया, क्यों? मगर ओह बेवकूफ, क्या तू नहीं जानता, कि जिसको आज़ाद मारना चाहे उसे खुदा भी नहीं बचा सकता?'

मैं समझ गया कि मेरी सुरक्षा के विचार से हमारे चले जाने के बाद आयशा ने गम्भीर को भेजा था। लेकिन गम्भीर ने बताया कि वह तो आयशा का सन्देश लेकर उसके भाई के पास जा रहा था।

इस कथन को झूठ मानकर आज़ाद जोर से हँसा और थोड़ी देर के बाद उसने पूछा—अच्छा बता, आयशा का क्या सन्देश है?

'यह तो मैं नहीं जानता। जो भी होगा इस चिट्ठी में लिखा हुआ है। मुझे तो इसे खान साहब के पास पहुँचाने का हुक्म है और मैं सिर्फ इतना ही जानता हूँ।'

'चिट्ठी इधर ला।' आज़ाद ने कहा।

'यह आपको देने की नहीं है।'

'मैं खान साहब को पहुँचा दूँगा; तू लौट जा।'

'अपने हाथों यह चिट्ठी उन्हें देने का मुझे हुक्म हुआ है।'

'मेरे हुक्म के ऊपर किसका हुक्म चलता है? अब बहस छोड़ और यह चिट्ठी मेरे हवाले कर।' आज़ाद ने ऊँचे स्वर में कहा।

गम्भीर थोड़ा मुस्कराया और उसने जवाब दिया—इस तरह तो चिट्ठी नहीं मिल सकती।

'इस तरह से चिट्ठी नहीं दी जाती तो फिर कैसे दी जाती है, यह मैं तुझे सिखाता हूँ।' कहकर आज़ाद ने तेज़ी से अपनी तलवार खींच ली और गम्भीर पर झपटा, मगर गम्भीर अपने स्थान पर निडर खड़ा रहा।

अब मैं बीच में पड़ा और आज़ाद को रोकते हुए गम्भीर को समझाया कि आज़ाद-जैसे अगुआ से कोई भी बात गुप्त नहीं रखना चाहिए। मैंने कहा—कम-से-कम आप मुझे तो यह चिट्ठी दे ही सकते हैं। अगर आयशा को एतराज होने-जैसी कोई बात हुई तो मैं आज़ाद को नहीं बताऊँगा।

मेरी इस बात से आश्वस्त होकर अन्त में गम्भीर मुझे चिट्ठी देने को राजी हो गया। मैं हिन्दी और उर्दू साधारण लिख-पढ़ लेता हूँ। अपनी क्रूर आँखों को तनिक-सा सिकोड़कर गम्भीर ने अपने कुर्ते में छिपाई चिट्ठी बाहर निकाली और मुझे पढ़ने को दी। चिट्ठी पढ़कर मुझे मालूम हुआ कि एक संघ यात्रा के लिए जा रहा है और उसे लूटने के लिए आयशा के भाई खान साहब को सूचना दी गई है। ठग लोगों की ठगी का अब मुझे पता चला।

मैंने चिट्ठी आज़ाद के हाथ पर रखकर गम्भीर के सामने देखा। उसके मुँह पर मुस्कराहट थी। चिट्ठी पढ़कर आज़ाद ने मुँह बिगाड़ा।

'ओ हो ! यह तो मैं कभी से जानता हूँ और खान साहब भी जानते हैं। तेरे जाने की कोई जरूरत नहीं। मैंने खान साहब को खबर भेज दी है।'

गम्भीर ने कहा—जब खान साहब को खबर मिल गई है तो फिर से चिट्ठी पहुँचाने की कोई जरूरत नहीं।

'पर तू जाना ही चाहता है तो जा। मैं साहब को उनकी छावनी में छोड़ आऊँगा।' आज़ाद ने गम्भीर से कहा।

'छावनी कितनी दूर है ?' मैंने पूछा।

'होगी एकाध कोस। आपकी खोज में कुछ सैनिक भी इधर आये हैं। मैं आपको उन्हीं में छोड़ दूँगा।' आज़ाद ने कहा।

'आप संघ को कब लूटनेवाले हैं ?' मैंने निरसंकोच भाव से पूछा।

आज़ाद इस प्रश्न को सुनकर मुस्करा दिया और बोला—आपकी छावनी के पड़ोस में आज रात ही लूटनेवाले हैं।

'हमारी सेना तो पास ही में है न ?' मैंने कहा।

'रहे, हर्ज ही क्या है ?' आज़ाद ने कहा।

मुझे लगा कि आज़ाद नाहक शेखी मार रहा है। मैंने उससे कहा—आप नाहक शेखी मारते हैं।

'अच्छा तो मैं आपसे शर्त बदता हूँ। आपके आला अफसर यहाँ पास ही हैं, उन्हें होशियार कर दीजिए। अपने सिपाहियों को भी सचेत कर दीजिए। सब लोग पक्का बन्दोबस्त कर लीजिए और फिर भी मैं आला अफसर की मेम के गले में से हार न निकाल लूँ तो मैंने ठग के यहाँ जन्म नहीं लिया !' आज़ाद ने कहा।

'मैं अपनी छावनी में जाकर खबर कर दूँगा। संघ की रक्षा करूँगा। क्या फिर भी आप लूट सकेंगे ?' मैंने पूछा।

'जरूर ! आज की रात वह संघ लूटा ही जायेगा।' आज़ाद ने कहा।

गम्भीर खड़ा-खड़ा सब सुन रहा था। मुझे जानने की इच्छा हुई कि ये लोग किस तरह लूटते हैं। मैंने ठगों की लूट के वृत्तान्त और

वर्णन तो सुने थे मगर आँखों से देखने का अवसर नहीं मिला था। अब जो अनायास ही अवसर मिलता देखा तो मैंने उसे छोड़ना ठीक नहीं समझा। लेकिन जब मैंने अपनी इच्छा व्यक्त की तो आज़ाद ने मुझे ज़िद न करने की सलाह दी। पर मैं अपनी बात पर अड़ा रहा और अन्त में आज़ाद राज़ी हो गया। एक पेड़ की छाया के नीचे घोड़ों की ज़ीन बिछाकर हम बैठे और रात होने की प्रतीक्षा करने लगे।

सहसा क्षितिज में से मानव उभरते दिखाई दिये। मेरी विचारधारा टूटी और मैं जागृत हुआ और मैंने समझा कि संघ के आदमी होंगे। मगर मेरी धारणा गलत निकली। वे सब संघ के आदमी नहीं थे। वह हिन्दुस्तान में सभी स्थानों पर घूमनेवाले साधु लोगों की एक जमात थी।

उन्होंने शरीर पर राख मल रखी थी। सारी देह पर लँगोटी के सिवाय और कोई वस्त्र नहीं था। शरीर से तगड़े और अनुशासन-बद्ध लगते थे। उनके काले शरीर पर मली हुई राख उनकी विचित्रता को बढ़ा रही थी। सभी के सिर पर जटा थी। हाथ में बड़े-बड़े चिमटे थे, और मानो अपनी विचित्रिता की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए ही वे चिमटों को बार-बार बजा रहे थे। प्रत्येक के कन्धे पर एक-एक झोली लटकी हुई थी। ऐसे दस-पन्द्रह खाखी साधु धीरे-धीरे हमारी ओर चले आ रहे थे। मुझे हँसी आ गई और मैंने आज़ाद से हसते-हँसते ही पूछा—इसी संघ को लूटना है?

आज़ाद हँसा, मगर उसने कोई जवाब नहीं दिया।

ये साधु धीमे-धीमे पास के एक विशाल वृक्ष के नीचे आये और 'अलख' की पुकार लगाकर अपनी-अपनी झोलियाँ नीचे रख चिमटे खटखटाते हुए बैठ गए। एक-दो साधुओं ने पास में पड़ी हुई डालियाँ और छोटी-छोटी लकड़ियों को इकट्ठा किया, और चार-पाँच धूनियाँ जलाकर उनके आस-पास बैठ गए। कइयों ने चिलमें निकालीं और पीने लगे। एक साधु ने झोली में से शंख निकाला और फूँकने लगा। शंख की ऐसी घोर आवाज़ सुनाई दी कि बस एकान्त निर्जन वन में चारों ओर उसकी अतिध्वनि गूँज उठी।

धीरे-धीरे साधु भोजन की तैयारी करने लगे। बड़े-बड़े तवों पर वे गेहूँ के आटे की रोटियाँ बनाने लगे। अब तक साधुओं की उस टोली ने वहाँ हमारी उपस्थिति की परवाह ही नहीं की थी; मानो हम उधर थे ही नहीं। सब अपनी-अपनी तैयारी में मशगूल थे। मगर जब रोटियाँ बन गईं तो साधुओं में से एक हमारे पास आया और हमसे भगवान का प्रसाद लेने का आग्रह करने लगा। भोजन को वे ईश्वर का प्रसाद मानते थे। आज़ाद उनका आग्रह देखकर राजी हो गया। उस साधु ने एक दूसरे साधु को भोजन लाने को कहा और वह स्वयं हमारे पास बैठ गया। वह साधु बड़ा ही वाचाल था। कई प्रकार की बातें करता रहा। इस सारे समय गम्भीर चुप बैठा रहा।

इतने में दूर से, अन्धकार में भी, थोड़ी धूल उड़ती दिखाई दी और घंटियों की मधुर आवाज़ कान पर पड़ी। साधु एक क्षण के लिए अपनी वाचालता भूल गया। आज़ाद भी तनकर बैठ गया। इतने में कई रथ और गाड़ियाँ आती दिखाई दीं। कई पहरेदार आगे-आगे चल रहे थे। मैं समझ गया कि ठग जिस यात्री-संघ को लूटना चाहते थे, वह अब आ रहा है।

करीब पन्द्रह सशस्त्र आदमी उस संघ की रक्षा कर रहे थे। रक्षकों के सिवाय करीब साठ आदमी उस संघ में थे। कई स्त्रियाँ और बच्चे भी थे। बड़े आनन्द और निश्चिन्तता से वह संघ आगे बढ़ रहा था। रथ के बैल सजाये हुए थे। उनकी गरदन में बाँधे हुए घुँघरुओं की झनकार सारे जंगल में सुनाई पड़ रही थी।

दूर से हमें देखकर संघ के रखवाले ठिठक गए। शस्त्रधारी रक्षकों में दो घुड़सवार भी थे, जो अपने घोड़े दौड़ाकर आगे आये। साधुओं ने न तो उनकी कुछ परवाह की और न कुछ पूछा ही।

'अरे, यह जमात किधर जा रही है?' एक घुड़सवार ने पूछा।

अब हमारे पास में बैठे हुए उस वाचाल साधु ने पुकारकर पूछा—क्या है, भाई! हमारी खाखी साधुओं की जमात है। अलख की धुन लगाते हैं और कल सुबह बद्रीनारायण की ओर परस्थान करेंगे।

'क्या पास में कोई गाँव है ?' सवार ने सवाल किया।

आज़ाद ने कहा—पास में यह गोरे लोगों का लश्कर पड़ा है। थोड़ी ही देर में वहाँ पहुँच जायेंगे। वहाँ जाकर पड़ाव डालिए, तो आपके संघ की रक्षा हो सकेगी।

आज़ाद की बात मानने के काफ़ी कारण थे। मैंने जब उनकी ओर देखा तो किसी को आज़ाद के कथन में शंका करता हुआ नहीं पाया। और आज़ाद का कहना सच भी था। गोरी चमड़ी अब सुरक्षा और सार्वभौमत्व का प्रतीक बन गई थी।

'आप किधर जा रहे हैं ?' उस सवार ने आज़ाद से पूछा।

'इन साहब के साथ शिकार में निकला था। बीच में साधु लोग मिल गए। साहब ने इन लोगों से बातें करना चाहा इसलिए हम यहाँ बैठ गए।' आज़ाद इस तरह कह रहा था कि सवार को उसकी बात पर पूरी तरह एतबार हो गया।

१० : संघ लूटा गया

रखवाले संघ की ओर गये और यात्रियों को पेड़ की छाया के नीचे ले आये। रथ और बैलगाड़ियों में से लोग नीचे उतरे। रखवालों ने बताया कि किसी को भी यहाँ नहीं उतरना चाहिए, गोरे साहब की छावनी के पास पड़ाव डालना ठीक रहेगा। मगर संघ के नेता अपने को रखवालों से अधिक समझदार समझते थे। उन्होंने घुड़सवारों की बातों को मानने से इनकार कर दिया।

गोरी छावनी के पास जाना उचित न समझकर वहीं पर रात बिताने का निश्चय हुआ। बच्चे आनन्द से किलकारियाँ देकर खेलने लगे। स्त्रियाँ अपनी-अपनी गठरी-पोटली खोलकर खाने-खिलाने की तैयारी में लग गईं। पुरुष इधर-उधर गप हाँकते हुए घूमने लगे और धीरे-धीरे उन साधुओं के साथ बातें करने में मशगूल हो गए। हमारे साथ बातों में लगा हुआ साधु अँधेरा होते ही उठ खड़ा हुआ और जो दूसरे साधु

रसोई पकाते थे उनके पास गया। एक झोली में से उसने कोई मूर्ति निकाली और एक चौकी के ऊपर रख दी। पास में दिया जलाया और संस्कृत भाषा में स्तवन करने लगा। सब साधु इकट्ठे हो गए और जोर-जोर से प्रार्थना करने लगे। मैं और आज़ाद दूर बैठे देख रहे थे।

मुझे बड़ा मज़ा आ रहा था। प्रधान साधु एक बड़ा दीपक लेकर देवता के आगे घुमाने लगा। दूसरे साधुओं ने तालियाँ बजा-बजाकर गाना चालू रखा। संघ में से कई श्रद्धालु स्त्री-पुरुष भी दर्शन के लिए वहाँ आये। बड़ी घंटी लेकर एक साधु उस पर हथौड़ी-जैसी किसी चीज़ से मारता था। कई साधु शंखध्वनि कर रहे थे।

धीरे-धीरे शोर बढ़ता गया और लम्बे अरसे तक देवता के सामने दीपक घुमाने की क्रिया चलती रही। यहाँ तक कि संघ के सभी यात्री वहाँ आ जमा हुए।

इतने में प्रधान साधु ने दीपक घुमाना बन्द किया और दीपक दूसरे शिष्य को सौंप दिया। दीपक लेकर यात्रियों में घूमता हुआ वह शिष्य सबको नीचे बैठने को कहता जाता था। जब सब नीचे बैठ गए तो दूसरा साधु हाथ में थाली लेकर लोगों को प्रसाद बाँटने लगा। एकाएक आज़ाद ने गहरी साँस खींची। देवता के पास बैठा हुआ साधु बराबर आज़ाद की ओर देखता जाता था। अब वह सतर्क हो गया। मैंने देखा तो आज़ाद अपनी जेब से कुछ निकाल रहा था। हिरन पर लपकने के लिए जितनी व्यग्रता और उत्सुकता चीते में होती है ठीक वैसी ही उत्सुकता मुझे आज़ाद के मुँह पर दिखाई दी।

आहिस्ते से आज़ाद ने अपनी जेब में से एक रूमाल निकालकर हिलाया। उसके रूमाल हिलाते ही सभी साधुओं ने यात्री संघ के समस्त पुरुष-वर्ग की गरदनों में रूमाल से फन्दे लगा दिये। प्रसाद बाँटने का कार्य वहीं-का-वहीं रुक गया। रखवालों और संघ के मुखियाओं की गरदनों में रेशमी रूमाल मुझे लिपटे हुए दिखाई दिये।

मारे भय के सब की घिग्घी बँध गई थी। बच्चे भी रो न सके। स्त्रियाँ आँखें फाड़े, बिना कुछ बोले, जो हो रहा था उसे देख रही थीं।

आचार्य ने जेब में से रूमाल निकालकर हिलाया और साधुओं ने तत्काल पुरुषों के गलों में फाँसी का फन्दा डाल दिया।

कोई खड़ा न होने पाया। सब अपनी-अपनी जगह पर मानो स्थिर हो गए जिनके गले में फन्दे थे उनके लिए तो हिलना-डुलना और भी मुश्किल था। ठग लोगों की चालाकी का मेरे लिए यह प्रथम दर्शन था। बातें तो बहुत सुन चुका था, मगर प्रत्यक्ष आज ही देखा और दंग रह गया।

बाघ और सिंह से भी अधिक ठगों का जो डर लोगों के मन में था उसका कारण आज मैं ठीक से समझ सका।

आज़ाद ने धीरे से मुझसे कहा—इन लोगों को हम एक पल में मार सकते हैं, मगर समरसिंह ने अभी-अभी कानून बदल दिया है। वह कहता है, नाहक किसी का खून नहीं होना चाहिए।

मैंने पूछा—ऐसा क्यों ?

'समरसिंह का कहना है कि ठग सिर्फ चोर, डाकू या खूनी नहीं। ठग तो ईश्वर का, महाकाली का सेवक है। महाकाली पापियों का, मक्खीचूसों का, अपराधियों, दुष्टों और राक्षसों का भोग लेती है। जिस किसी को भी मारने से मा कुपित होती और उसका प्रकोप सहन करना पड़ता है। मा की मरजी के खिलाफ खून होने से ही हमारी अवनति होने लगी है। सब लोगों ने उसकी इस बात को सही माना। उस समय मुझे भी यह बात ठीक मालूम हुई। सबने क़सम खाई है कि नाहक किसी का खून नहीं करेंगे।'

'अवनति का क्या मतलब ?' मैंने पूछा।

'देखिए न, आप साहब लोग हमारे पीछे पड़े हैं, यह हमारी अवनति नहीं तो क्या है ? आज तक कई छोटे-बड़े राजा हमें आश्रय देते आये, अब यह भी कम होता जा रहा है। आपके हाथ में सत्ता आई पर हम उसका पर्याप्त विरोध नहीं कर पा रहे हैं।'

'तो अब अपना यह काम बन्द क्यों नहीं कर देते ?' मैंने कहा।

'अभी तो हम सुमरा के बताये रास्ते पर चल रहे हैं। लोगों को बिना मारे अगर हम मा को प्रसन्न कर सकें तो आप खुद हमारे पास सहायता के लिए दौड़े आयेंगे।'

मैं इस अन्धविश्वासी और विचित्र आदमी तथा उसकी विचित्र भावना के बारे में सोचने लगा। इतने में उसने मुझे समझाया—

किसी को भी शारीरिक हानि पहुँचाये बिना जो अपना काम निकाल सकता है वही सच्चा ठग माना जाता है। बिना खून किये कार्य करने-वाले जल्दी से नायक की पदवी प्राप्त कर सकते हैं। सुमरा ने तो शपथ ली है कि कभी शस्त्र का उपयोग नहीं करेगा और न कभी किसी का खून ही करेगा।

यह सुनकर मुझे थोड़ी शान्ति मिली। वरना निरपराधी मनुष्यों को रूमाल के एक झटके से मृत्यु के मुख में जाते देखना कँपा देनेवाला दृश्य था। आज़ाद के बताने से पहले तो मैं यही मानता था कि फन्दे में फँसे मनुष्यों के शव अभी देखने को मिलेंगे और इस विचार-मात्र से काँप रहा था।

बढ़ते हुए अन्धकार में वह साधु बोला—रामचरण! आपने रथ में जो सन्दूक छिपाई हुई है उसे हमारे हवाले कर दो। नहीं तो उस सन्दूक का धन देखने को आप जीवित नहीं रहेंगे; उसका उपयोग करने की बात तो बाद में आयेगी।

'हाँ, हाँ, भाई! मैं सन्दूक लाकर देती हूँ।' बीच में ही एक स्त्री बोल उठी।

रामचरण सेठ बड़बड़ाने लगे—मुझे जान से मार डालिए, मगर सन्दूक मैं नहीं दूँगा। इतनी मेहनत से कमाई हुई दौलत यों ही दे दूँ! भगवान तुम्हारा भला नहीं करेगा!

उस साधु ने फिर तकाज़ा किया—क्यों सेठ! सन्दूक मँगवाते हैं या नहीं? अगर मेरे एक, दो और तीन बोलने के पहिले आपने सन्दूक नहीं मँगवाई तो यहीं जिन्दा जला दिये जाओगे। देखो, मैं अब तीन तक गिनता हूँ। एक.... दो....और....

'जा भाई, जा! ले आ सन्दूक और दे मार इन लोगों के खोपड़े पर। न जाने कहाँ से यह बला सिर पर आन पड़ी।'

लाचार होकर वह औरत रथ के पास गई और उसमें से एक लकड़ी की सन्दूक निकाल लाई। सन्दूक को देखकर शायद ही कोई मानता कि रामचरण सेठ की मिल्कियत इस सड़ी सन्दूक में होगी। लूटनेवाला

तो ऐसी मैली, पुरानी और बेढंगी सन्दूक की ओर नज़र भी न डालता। मगर ठग लोग ऐसी सन्दूकों को खूब पहचानते थे।

प्रधान साधु ने सन्दूक को हाथ में ले लिया। वह रामचरण सेठ के पास जाकर बोला—सेठ इस समय तो जीवित बच गए हो, मगर अब सँभलकर रहना। गरीबों और विधवाओं को सूद के बारे में सताना मत। और राजाओं के जवाहरात हज़म करने की नीयत भी मत रखना। नहीं तो दूसरी बार बच न सकोगे।

सेठ के गले से फन्दा निकाल दिया गया और साथ-साथ दूसरे सबके गले से भी निकाला गया।

साधु जाने लगे। उनकी धूनियाँ अब भी धुआँ दे रही थीं।

मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। इतने सब मर्द जीवित थे, फिर भी अल्पसंख्यक ठगों के सामने कोई अँगुली भी न उठा सका और ठग लोग शान्ति से लूट-पाट करके चलते बने।

'मान लो कि इन लोगों ने तुम पर आक्रमण किया होता, तो ?' मैंने आज़ाद से पूछा।

'ऐसा प्रसंग अभी तक तो आया नहीं है।' आज़ाद ने कहा। "और कभी ऐसा हो भी जाये तो प्रत्येक साधु की झोली में कटार मौजूद रहती है। उस कटार की काट से कोई बच नहीं सकता। केवल गम्भीर और मैं ही इन सब के लिए काफी हैं।'

साधु चले गए। संघवाले आदमी तो आज़ाद को सिर्फ मेरे साथी के रूप में ही जानते थे। और हमारे सामने ही ठगों ने अपना पराक्रम दिखाया था इसलिए, न चाहते हुए भी, वे यात्री लोग ठगों की तारीफ कर रहे थे। आज़ाद ने सब को पुनः यही सलाह दी कि अब भी ठगों से बचना हो तो अँग्रेजों की छावनी की ओर चले जाओ।

आज़ाद की सलाह के अनुसार छावनी के पास जाकर सबने रात गुज़ारना पसन्द किया।

मैंने पूछा—आज़ाद, क्या आपके कहने के अनुसार हमारी सेना सचमुच इधर है ?

मैं आपसे झूठ नहीं बोलूँगा। देखिए, सामने अन्धकार में उस झाड़ी के नीचे थोड़ा उजेला दिखाई पड़ता है। आप उधर जाइए, वहीं आपकी छावनी है। मैं फिर मिलूँगा। आप मटिल्डावाली बात मत भूलिएगा। और समरसिंह को मैं नहीं भूलूँगा।'

११ : जादू के खेल

इतना कहकर आज़ाद ने अपना घोड़ा मोड़ा और तेज़ी से अन्धकार में विलीन हो गया।

मैं भी धीरे-धीरे उजाले की ओर चला। मेरे दिल में आज एक प्रकार की खुशी थी। मेरे ही आदमी मुझे मिलेंगे, इस विचार से मेरा हृदय प्रफुल्लित हो रहा था।

इतने में एक पहरेदार ने मुझे पुकारा और रोका। उसकी आवाज़ मैंने पहचानी और प्रत्युत्तर देकर उसे अपने पास बुलाया। मुझे देखकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। वह मेरी खैरियत पूछने लगा।

मैंने उससे कहा—अब मैं सलामत हूँ। जा, जाके सबको बता दे कि मैं आया हूँ।

वह खबर करने को छावनी की ओर दौड़ा गया।

एकाएक एक काले कद्दावर आदमी को मैंने अपने घोड़े के पास खड़ा पाया। मैं चौंक पड़ा। अँधेरे में उसका मुँह ठीक से पहचान न सका।

'साहब!' वह बोला और मैंने गम्भीर की आवाज़ पहचानी। 'हाँ साहब, यह अच्छा ही हुआ कि आयशा ने दूरदर्शिता से काम लिया और मुझे भेज दिया; नहीं तो आप सलामत नहीं पहुँच पाते।'

'अच्छा?'

'हाँ साहब, आज़ाद आपको छोड़नेवाला आदमी नहीं है। आयशा ने आपको बन्धन से छुड़ा तो दिया, मगर उसे बराबर डर लगा रहा

और इसलिए मुझे आपकी हिफाजत के लिए साथ भेजा।' गम्भीर ने कहा।

आयशा के लिए मेरे दिल में वैसे भी ऊँचा स्थान था; गम्भीर के इस कथन के बाद तो उसके लिए मेरे दिल में आदर और भी बढ़ गया।

'वह मेरा इतना खयाल रखती हैं!' मैंने आश्चर्य व्यक्त किया।

'समरसिंह ने आपकी देखभाल करने का कार्य आयशा को सौंपा था। मैं हमेशा उनके साथ रहता हूँ फिर भी इस बार वह मुझे अपने साथ नहीं ले गए। इसका कारण आप समझ ही सकते हैं! आपकी देखभाल के ही लिए उन्होंने मुझे घर छोड़ा था, साथ ले जाने का केवल दिखावा था।'

उधर छावनी में कोलाहल मच गया। शायद वह कोलाहल मेरे आने की खबर के ही कारण था। कुछ लोगों को मैंने अपनी ओर आते हुए भी देखा।

'अब मैं जाता हूँ साहब। आप तो छावनी में पहुँच ही गए।'

मेरे जवाब देने के पहिले ही गम्भीर रात के अन्धकार में विलीन भी हो गया। छावनी में से सैनिकों की टोली मेरी ओर आ रही थी। आकर सबने खुशी के नारे लगाये।

मेरा एक मातहत अफसर मेरे साथ तम्बू में आया और मेरी अनुपस्थिति में जो कुछ हुआ था उसका विवरण कह सुनाया।

मैं छावनी में आगे बढ़ा।

मैं लापता हो गया और सारा सामान जल गया— ये दो बड़े महत्व के समाचार थे। मैं जीवित हूँ या नहीं? जीवित हूँ तो कहाँ हूँ? ठग लोग मुझ पर कैसा सितम ढाते होंगे, इत्यादि अनेक प्रश्न उपस्थित हुए। मुझे ढूँढ़ने के प्रयास हुए। सरकार को भी रिपोर्ट भेजी गई।

आखिर मेरी छावनी को उठाकर इस नये स्थान पर लाने का हुक्म हुआ। और मैं वहीं आ पहुँचा।

कुछ दिनों के बाद कलकत्ता से हुक्म मिला कि मुझे गवर्नर जनरल से मिलना चाहिए और उन्हें पूरी हकीकत सुनाने के बाद आखिरी हुक्म

लेना चाहिए। ठग लोगों ने हमारी छावनी को जलाया, मुझे, लश्कर के सेनापति को, उठा ले गए और हमारी छावनी के नजदीक ही संघ को लूटा, इन सब बातों ने ठग लोगों के अत्याचारों को गम्भीर रूप दे दिया। यह भी सुनने को मिला कि नेपाल, काबुल, चीन, और रूस में ठग लोग अपने साथियों की मदद से अँग्रेजी सरकार के विरुद्ध आन्दोलन कर रहे हैं। सबसे संगीन समाचार रूस के थे।

समरसिंह के कमरे में से मिले हुए कागजों पर से ठग लोगों की भयानक शक्ति का पूरा परिचय मुझे हो चुका था। इन सब कारणों की वजह से गवर्नर जनरल भी चिन्तित थे। इसी लिए मुझे तथा साथ में दूसरे सेनापतियों, और अनुभवी अधिकारियों को बुलाकर सलाह-मशविरा करने का निश्चय किया गया था। वहाँ गये बिना कोई चारा नहीं था इसलिए अपने मददगार को छावनी की देखभाल सौंपकर मैं थोड़े आदमियों के साथ प्रधान सेनापति के पास जाने को निकला। वहीं से मुझे लाट साहब से मिलने जाना था। रास्ते में ठग लोगों का भय तो था ही, मगर कोई खास मुसीबत नहीं आई और मैं सकुशल मुकाम पर पहुँच गया।

सबसे पहले मैं प्रधान सेनापति से मिला। उन्होंने मुझसे कई सवाल पूछे और बताया कि स्थिति भयानक होती जा रही है, इसलिए खुद गवर्नर जनरल मौके पर आने के लिए निकल चुके हैं। खुद गवर्नर जनरल को इस तरह मौके पर आना पड़े, यह मेरे लिए शर्म की बात थी। मैंने इसे अनुचित मानकर इस्तीफा दे देने की प्रार्थना की। सेनापति यह सुनकर हँसे और इतनी जल्दीबाजी न करने की सलाह देकर कहने लगे कि कभी-कभी गम्भीर परिस्थितियों में बड़ों की सलाह लेने में शर्म की कोई बात नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि सरकार का तुम पर पूरा विश्वास है। उन्होंने आगे चलकर गवर्नर जनरल से मिलने की सलाह दी। वह रास्ते में एक बँगले में पड़ाव डालनेवाले थे। उधर जाने के लिए हम तैयार हुए। रास्ते में प्रधान सेनापति को मैंने बहुत-सी बातें बतलाईं और उन्होंने सब बातों को ध्यान से सुना।

मेरी योजनाओं के बारे में उन्होंने गम्भीरता से विचार किया और उन्हें लाट साहब के आगे रखने का वादा किया। थोड़े दिनों में हम बँगले पर आ पहुँचे। गवर्नर जनरल वहाँ एक दिन पहिले ही आ चुके थे। जाते ही हम उनसे मिले। कुछ बातें हुईं और शाम को हमें भोजन के लिए निमंत्रित किया गया।

शाम को मैं गवर्नर जनरल के बँगले पर फिर से गया। वहाँ बहुत-से लोग आये हुए थे। वहीं मुझे पता चला कि मेहमानों के लिए स्थानीय अफसरों ने खेल-तमाशों का प्रबन्ध किया है और हिन्दुस्तान के मशहूर जादूगरों के खेल भी रखे गए हैं। काम-काज की भीड़ में भी हम अँग्रेज खेल-कूद को नहीं भूलते। मगर जादूगर की बात सुनकर मुझे थोड़ा संकोच अवश्य हुआ।

हिन्दुस्तान के जादूगर बहुत विख्यात हैं। उनके कार्य सचमुच अद्भुत होते हैं। वे लोग मनमौजी, विचित्र और विनयी मालूम होते हैं, फिर भी उनकी काबिलियत और होशियारी से मुझे हमेशा आशंका होती है कि वे जादूगर होने के साथ-साथ और भी कोई काम अवश्य करते होंगे। मेरी यह आशंका बढ़ती ही गई। मुझे ऐसा प्रतीत होने लगा कि ये जादूगर ठगों से भी अवश्य मिले हुए होना चाहिए।

बँगले के मैदान में एक बड़ा तम्बू खड़ा कर दिया गया था और वहीं जादू के खेल होनेवाले थे। संध्या का समय था। कारण कुछ भी हो, मगर ऐसा लग रहा था कि जादू के खेल मुझे पसन्द नहीं आयेंगे। परन्तु दूसरे मेहमान बड़े उत्साह के साथ जादूगर की राह देख रहे थे। उन मेहमानों में स्त्रियाँ भी थीं।

एकाएक मालूम हुआ कि जादूगर आ गया है। सब उसकी बड़ी तारीफ करते और उसे एक चमत्कारिक पुरुष मानते थे।

तम्बू में कुर्सियाँ, अर्द्ध गोलाकार रखी गई थीं। इन कुर्सियों पर मेहमानों के बैठने की व्यवस्था थी। सबसे आगे दो बड़ी कुर्सियों पर लाट साहब और उनकी मेम साहिबा ने स्थान लिया। सामने जादूगर ने एक लम्बे परदे के पीछे जल्दी से सारा इन्तजाम कर लिया।

अन्त में जादूगर ने काला परदा उठा लिया। हम सब ने तालियाँ बजाकर उसका स्वागत किया। जादूगर बड़े अदब के साथ झुका। उसने और उसके शागिर्दों ने देखनेवालों को अपने हाथों की सफाई से हैरानी में डाल दिया। एक चीज की दस चीजें बना देना, चीजों को एकाएक गायब कर देना और फिर ऐसी जगह से निकालना, जो कल्पना के बाहर हों, आदि बहुत-सी करामातें उन्होंने दिखाईं।

जादूगर बीच-बीच में बताता जाता था कि जिस किसी को उसकी करामात मालूम हो जाये वह मेहरबानी करके बता दे। अगर कोई उसकी तलाशी लेकर रहस्य का पता लगाना चाहे तो वह उसके लिए भी तैयार था। वह अपने शागिर्दों पर ही नहीं दर्शकों पर भी जादू करके दिखा सकता था।

जादूगर चालाक होते हैं, यह तो मुझे मालूम ही था। ये लोग मानव-स्वभाव के अच्छे जानकार होते हैं, यह भी मैं जानता था। जादूगर भी ताड़ गया कि प्रमुदित हो रही सारी मंडली में से सिर्फ मुझी पर उसके जादू का असर नहीं हो रहा है। उसकी इस जानकारी ने मुझे हैरत में डाल दिया।

उसने मुझे सम्बोधित करते हुए कहा—आपको मेरी करामातों में अधिक दिलचस्पी मालूम नहीं देती। मगर सारी दुनिया में आज तक किसी ने न देखा हो ऐसा जादू मैं दिखाता हूँ।

जादूगरों के खेलों से चकित न होने का मानो मैंने निश्चय किया हो, इस तरह तिरस्कारपूर्वक हँसते हुए मैंने कहा—अगर आप ऐसा जादू दिखाएँगे तो मैं खुशी से तालियाँ बजाऊँगा।

थोड़ा भी घबराए बिना उसने मुस्कराते हुए कहा—जी हाँ! मुझे तालियों की ही भूख है। सबने मेरी उस भूख को पूरा किया है, मगर आपने बड़ी कंजूसी की है। आपकी एक ताली की कीमत मैं एक लाख रुपये आँकता हूँ। अगर सचमुच खुश हों तो दिल से तारीफ कीजिएगा।

फिर उसने बड़े अदब के साथ लाट साहब की बैठक के पीछे, कुछ दूरी पर एक छोटा काला परदा बाँधने की इजाजत चाही। मेरे

वहाँ बैठे स्त्री-पुरुषों की कुर्सियों पर साँप फन फैलाये खड़े थे।

पास बैठी और ताज्जुब में डूबी हुई एक मेम ने पूछा—इधर क्या दिखाएगा ?

मैंने झुँझलाकर कहा—जहन्नुम !

जादूगर ने सुना तो हँसकर बोला—नहीं साहब, जन्नत दिखाऊँगा। जन्नत की हूरों का नाच दिखाऊँगा।

लाट साहब की बैठक के पीछे काला परदा बाँधने की इजाजत उसे दे दी गई। उसके दो आदमियों ने काला परदा बाँधने की तैयारी की और इधर जादूगर अपने खेल दिखाने लगा।

'साहब ! हिन्दुस्तान के नाग बहुत सुन्दर होते हैं।' इतना कहकर उसने एक मुरली हाथ में ली और कोई पाँच क्षण तक अत्यन्त मधुर स्वर में बजाता रहा। बाँस के उस ग्रामीण बाजे में इतनी मधुरता होगी यह तो हममें से शायद ही किसी ने सोचा होगा। सब उसके स्वर में तल्लीन हो गए।

सहसा उसने मुरली बजाना बन्द कर दिया और मुस्कराता हुआ बोला—देखिए, देखिए ! स्लीमान साहब के ऊपर नाग फन फैलाये खड़ा है !

हर किसी ने चौंककर मेरी ओर देखा। और खुद मैं भी चौंक पड़ा। एक भयानक काला साँप, मेरी कुर्सी को घेरकर, मेरे सिर पर फन फैलाये खड़ा था। जादूगर मेरे पास ही था।

'जिसके सिर पर नाग का छत्र होता है वह आदमी हमारे यहाँ बड़ा भाग्यवान समझा जाता है।'

इतना कहते हुए उसने बड़े प्रेम से नाग को मेरे पास से ले लिया और उस भयानक प्राणी को आसानी से अपनी गरदन में लपेट लिया। उसने आगे कहा—काले शरीर के नीचे सौन्दर्य का निवास होता है। गोरी चमड़ी के साथ बदसूरती अधिक होती है। श्रीमान महाशयो, अगर इस रंगभेद को भुलाया गया तो काला नाग आपके ऊपर भी छत्र धरेगा। और अगर रंगभेद की यह दृष्टि कायम रही तो नाग के सहस्र फन निकल आयेंगे। और फन ही नहीं निकल आयेंगे उसकी

प्रत्येक जिह्वा से विष टपकने लगेगा। उसकी आँखों से अग्नि बरसने लगेगी और छेड़नेवाले को वह कभी भी नहीं छूटनेवाली अपनी नागचूड़ में जकड़कर उसका प्राणान्त कर देगा।

उसके बोलने का ढंग बड़ा ही मोहक था। नाग के रूपक से वह हम अँग्रेजों को सम्बोधित कर हिन्द की काली प्रजा के साथ किस तरह का बरताव करना चाहिए, यह उपदेश दे रहा था। भारतीय दार्शनिक तो होते ही हैं।

'देखिए, देखिए!' कहकर उस जादूगर ने चार-पाँच जगह उँगली से दिखाया और जहाँ-जहाँ उसने दिखलाया था वहाँ-बैठे चार-पाँच स्त्री-पुरुषों की कुर्सियों पर एक साथ पाँच-छह नाग निकलते दिखाई दिये। अब तो सब लोगों में खलबली मच गई। कई आदमी खड़े हो गए और नाग से बचने के लिए, मारे घबराहट के, जिधर रास्ता मिला दौड़ पड़े।

यह देख जादूगर हँसने लगा और बोला—नहीं-नहीं, साहब! इन नागों से आप मत घबराइए। आप हाथ में लेकर इनसे खेल सकते हैं, माला बनाकर गले में डाल सकते हैं।

मगर नाग के साथ खेलने और माला बनाकर गले में डालने का साहस ही किस में था!

जादूगर फिर अपनी मुरली बजाने लगा। उसके मधुर संगीत को सुन जितने साँप थे सब धीरे-धीरे जादूगर के पास आकर उसके पाँव और गरदन से लिपट गए। जादूगर संगीत के मधुर प्रभाव के कारण सुध-बुध भूले स्त्री-पुरुषों की स्थिति को अच्छी तरह जानता था। केवल मेरे ही मन में शंका हो रही थी कि क्या यह सचमुच जादूगर के भेष में कोई ठग अथवा छलिया तो नहीं है।

संगीत में मुग्ध होते हुए भी मैं अपनी सुध-बुध में था। एकाएक संगीत बन्द हुआ, नाग अदृश्य हो गए और जादूगर ने अपने सामने का काला परदा उठाया। परदा खुलते ही एक अजीब ढंग की खुशबू चारों ओर फैल गई। जादूगर बड़े ही मोहक ढंग से हँसा। उस सुन्दर

हँसी के कारण वह मुझे बड़ा स्वरूपवान और कुछ-कुछ परिचित-सा भी लगा।

संगीत फिर शुरू हुआ। और इस बार उसके साथ पायल की झनकार भी सुनाई दी। फिर हमने अपनी आँखों के आगे एक रूपसुन्दरी को आकाश में अधर नाचते देखा।

यह जादू सबसे जोरदार था। मेरी टिप्पणी के उत्तर में उसने जन्नत की हूर का नाच दिखाने की बात कही थी, उसे सच कर दिखाया। देखनेवालों के आश्चर्य का ठिकाना न था। साथ में एक विचित्र आकर्षक सुगन्ध भी फैल रही थी।

उस सुन्दरी का नाच अतीव मोहक था। नाचती हुई वह नागिन की भाँति मालूम पड़ती थी। साँप की तरह ऐंठती, बल खाती, लहराती फन फैलाती, फुफकारती, दंश मारती हुई-सी वह नाच रही थी।

आखिर में नृत्य बन्द हुआ। संगीत भी शान्त हो गया और खुशबू विलीन होती गई। जादूगर फिर हम सब के समक्ष खड़ा हो गया।

सुन्दर स्त्री-पुरुषों को देखकर हमें ऐसा लगता है मानो हमने उनको कहीं देखा है। कभी-कभी मुखमुद्रा, आँख का इशारा, स्मिति की रेखा कल्पना को सजीव कर देती है और उसके सहारे हम पहिले देखे हुए सुन्दर मनुष्यों को पहिली ही बार देख रहे सुन्दर लोगों में खोजने का प्रयत्न करने लग जाते हैं। इस समय मैं ऐसी ही मानसिक प्रक्रिया में उलझा हुआ था! रह-रहकर मुझे लगता था कि इस जादूगर और इस नाचनेवाली को मैंने पहले कहीं देखा है।

जादूगर का सबने तालियों की गड़गड़ाहट से अभिनन्दन किया। इस समय मैंने भी ताली बजा दी। मुझे ताली बजाते देख जादूगर खुश हो गया। समय हो जाने से खेल पूरा होने की उसने सूचना दी।

उधर खाने का वक्त भी हो गया था। सब उठ-उठकर खाने के स्थान की ओर जाने लगे। जादूगर को लाट साहब के निजी सचिव इनाम देना चाहते थे, मगर जादूगर ने कुछ भी लेने से इनकार कर दिया।

'हुजूर को किसी इनाम के लोभ से मैंने खेल नहीं दिखाए। मैं पैसों का भूखा नहीं हूँ। मेरे फन की कद्र करके आपने मेरी करामात देखी, यही मेरे लिए सबसे बड़ा इनाम है।'

इतना कहकर जादूगर ने जाने की इजाजत माँगी। सब कोई तंबू से बाहर निकले। जादूगर भी फुर्ती से अपना बोरिया-बिस्तरा बाँधकर रवाना हो गया। जाते-जाते उसने मुझे देखा और मेरे पास आकर बोला—साहब, ऐसा लगता है कि आपको कहीं देखा है।

बिना बुलाये एक जादूगर का समीप आकर बात करना मुझे पसन्द नहीं आया। मैंने 'देखा होगा' कहकर उसे टाल दिया।

'मैं आपसे फिर मिलूँगा।' कहकर जादूगर तेजी से चलता बना।

जब भोजन के लिए सजाई गई मेजों के पास पहुँचा तो लगा, मानो कोई अनहोनी घटना घट गई है। सबके चेहरे उतरे हुए थे। लाट साहब अपनी मेम के साथ सबका हँस-हँसकर स्वागत कर रहे थे, परन्तु उनकी वह हँसी बनावटी लग रही थी और दोनो के चेहरों पर शोक की घनी छाया थी।

मैंने, कुर्सी पर बैठते हुए, अपने समीपवाली औरत से इसका कारण पूछा तो उसने कहा—लाट साहब की मेम के गले का कीमती कण्ठा अभी-अभी चोरी चला गया....

१२ : खोये हुए हार का पता

भोजन के नियम को तोड़कर मैं फौरन उठा। सेक्रेटरी से पूछा तो लाट साहब की मेम के हार खोने की बात सही मालूम पड़ी। इतने आदमियों के बीच में से खुद उनके गले के हार का जाना सच-मुच बड़ी अद्भुत बात थी। जादूगर के जादू से भी यह जादू अधिक अद्भुत था। मुझे जादूगर याद आया। उसके ऊपर मुझे शुरू से ही शंका थी और किसी से बिना कुछ कहे मैंने अपने तीन आदमियों को उस पर नजर रखने के लिए तैनात भी कर दिया था। जादूगर को गये अधिक

समय नहीं हुआ था और मेरे आदमी भी उसके पीछे गये थे, इसलिए उसके बारे में खबर मिलेगी, इसका मुझे पूर्ण विश्वास था। अब मैं भी मकान के बाहर निकल आया। जादूगर किस ओर गया है, यह मैंने चार-पाँच आदमियों से पूछा और उनके बताये रास्ते पर चलने लगा। थोड़ी दूर जाने पर जादूगर के पीछे लगाये हुए आदमियों में से एक मुझे मिला। उसने बताया कि जादूगर और उसके साथी शहर के बाहर एक रास्ते पर चले जा रहे हैं और उनके पीछे हमारा दूसरा आदमी लगा हुआ है। यह सुन मैं जल्दी से आगे बढ़ा। कुछ चलने पर जादूगर के आदमियों-जैसी एक टोली दिखाई दी, मगर पास पहुँचने पर मालूम हुआ कि वह तो यात्रियों की टोली थी। यह भी पता चला कि जादूगर इधर आया ही नहीं। अब तो अपने आदमियों पर मुझे बड़ा गुस्सा आया और मैं लौट गया। लौटते में शहर के नजदीक, शहर की ओर से, एक घुड़सवार दौड़ता हुआ आता दिखाई दिया। उस घोड़े, घुड़सवार और उसकी तेज चाल को देखकर मैंने सोचा कि यह जादूगर के आदमियों ने मेरे आदमियों को धोखा देकर भाग जाने की तरकीब चली है। मैं उस घुड़सवार को रोकने की सोच ही रहा था कि वह स्वयं मेरे समीप आकर उतर पड़ा। उस उतरनेवाले को देखकर मैं चकित ही रह गया। और कोई नहीं, ठगों का भयंकर सरदार आजाद स्वयं मेरे सामने खड़ा था। यह यहाँ कहाँ से? दूसरे ही क्षण मुझे जादूगर और उसके खेल याद हो आये। मुझे विश्वास हो गया कि हार को चुराने का काम ठग लोगों ने ही जादू के खेल के बहाने किया है।

फिर मुझे आजाद की वह शर्त भी याद आई। उसने कहा था कि वह सब लोगों के सामने लाट साहब की मेम के गले का हार निकाल लेगा। अब तो मुझे कोई शंका ही नहीं रही। हार चुराने वाला आजाद और उसकी टोली के ठग ही होने चाहिए।

मुझे बड़ा गुस्सा आया। मगर मैं कुछ कहूँ उसके पहिले ही आजाद कहा—कहिए स्लीमान साहब! मेम साहिबा के गले का हार सबके देखते हुए चुरा लिया गया न?

मैंने उसे जवाब दिया—हाँ, हमारे देखते हुए हार चुराया गया। मगर हार चुरानेवाला अब खुद मेरे हाथों में फँस गया है। और अगर हार न मिला तो बदले में उसको जान से हाथ धोना पड़ेगा। चोर मेरे सामने ही खड़ा है!

'क्या मुझ पर शुबहा हो रहा है?' आज़ाद ने पूछा और वह आगे बोला, 'हाँ, हाँ, मैं समझ गया। आपका शुबहा करना दुरुस्त हो सकता था, मगर ऐसा होता तो मैं आपके सामने कभी न आता और न यों खड़ा होता। साहब, मेरे दुश्मन ने ही वह हार मेरे हाथ में आने के पहिले हथियाकर मेरी जिन्दगी मिट्टी में मिला दी है। मगर मैं इसका बदला लूँगा। ऐसे लाखों हार चुराने का यश उसे प्राप्त हो तो भी मैं बदला लिये बिना नहीं रहूँगा।'

उसकी आँखों में से मानो अग्नि बरस रही थी। मुझे सन्देह हुआ कि शायद मेरे पंजे से छूटने के लिए तो वह ऐसा अभिनय नहीं कर रहा है!

आज़ाद फिर बोला—अब देखता हूँ मुझे कौन रोकता है? ठग और ठगों का सारा संगठन चाहे भाड़ में जाये, चाहे तितर-बितर हो जाये। यकीन मानिए साहब, अब आपको ठगों के त्रास से अवश्य छुटकारा मिलेगा। ठगों का नाश करने के लिए आपको तकलीफ करने की कोई जरूरत नहीं। मैं खुद ही इनका नाश किये देता हूँ।

इतना कहकर आज़ाद घोड़े पर सवार हुआ और चल दिया।

मेरे अचरज का कोई पार न था। आज़ाद यहाँ कैसे? क्या ठगों की टोली यहाँ भी आ धमकी? इनका क्या इलाज किया जाये? हार कैसे वापस पाया जाये? इन विचारों में डूबा हुआ मैं, रात का भोजन छोड़कर, एक सन्देहास्पद व्यक्ति के पीछे हैरान होकर, अपनी कोठरी में आकर सो रहा। आज नींद आने की तो कोई सम्भावना थी नहीं। इसलिए अपनी डायरी के पन्ने उलटकर समय काटने लगा।

इतने में नौकर ने मेरी कोठरी का दरवाजा खटखटाया। मैंने फौरन किवाड़ खोल दिये। इतनी रात बीते मुझे तकलीफ देने के लिए मैं

उसको डाँटने जा ही रहा था कि उसने कहा—साहब ! माफ कीजिएगा। मगर कोई आदमी आपसे मिलना चाहता है। वह कहता है कि चोरी गए हुए हार का उसने पता लगाया है।

मैंने उसे तुरन्त भेजने को कहा। दूसरे ही क्षण नौकर ने फिर दरवाजा खोला और उसके साथ उसी जादूगर ने प्रवेश किया। जादूगर को देखकर मैं एकदम गुस्सा हो गया। मैंने चिल्लाकर कहा—कहाँ है वह हार ?

'यह है।' कहते हुए जादूगर ने अपने कपड़े में से खोया हुआ हार निकालकर मेरे सामने रख दिया। मेरी खुशी का ठिकाना न रहा। वही था वह खोया हुआ हार। मैंने हार लेने को हाथ बढ़ाया, मगर उसने अपनी मुट्ठी बन्द कर ली और हाथ वापस ले लिया।

'हार लाओ ! एकदम मेरे हाथ में रख दो, दूसरी बात बाद में। मैं तुम सब बदमाशों को पहचानता हूँ।' मैंने डपटकर कहा।

'आपने क्या मुझे अब भी नहीं पहचाना ?' जादूगर ने पूछा।

'नहीं, मुझे कुछ याद नहीं आता।' मैंने कहा।

तब जादूगर ने मुड़कर अपने मुँह पर हाथ फेरा और मेरे सामने देखा। उसको देखकर मैं भौचक्का रह गया। वह समरसिंह था।

अब समरसिंह हँसकर बोला—वाह साहब, क्या आप सच ही मुझे पहचान न सके। मुझे तो खेल करते भी डर लग रहा था। आशंका थी कि आप मुझे पहचान लेंगे। अब कोई भय नहीं। हार मेरे पास है और मैंने ही हार लिया था। यदि मैंने न लिया होता तो आजाद ले जाता। मैं हार आपको वापस देकर आपका सम्मान और प्रतिष्ठा बढ़ाऊँगा। आजाद के पास से आपको कभी भी हार न मिलता।

इतना कहकर उसने फिर मुट्ठी खोली और हार मेरे हाथ में रख दिया। मैंने उसका आभार माना।

'अभी जाकर यह हार लाट साहब को पहुँचा आइए। मैं थोड़ी दूर तक आपके साथ चलूँगा। मगर अब आपको मेरे साथ लम्बी यात्रा

करनी होगी। आज ही रात को निकलना होगा। जब कारण जान जायेंगे तो आपको लम्बी मुसाफिरी के लिए पछतावा नहीं होगा। अब आप उठिए और कपड़े पहनिए।' समरसिंह ने यह सारी बात बहुत जोर देकर कही थी। मैं उठा और कपड़े पहने। तब मैं और समरसिंह रात के अन्धकार में लाट साहब के बँगले की ओर चले। वहाँ पहुँचने पर समरसिंह को एक स्थान पर खड़ा करके मैंने लाट साहब के निजी सचिव के कमरे के आगे जाकर दरवाज़ा खटखटाया। उसने जागकर पूछा—'कौन है।' यह सेक्रेटरी मेरा दोस्त था।

मैंने कहा—चोरी गया हुआ हार देने को मैं खुद आया हूँ। अभी ही मैं उसको पा सका हूँ। उस पर बहुतों की नज़र है। इसलिए स्वयं मेम साहिबा के हाथ में उसे देना चाहता हूँ और वह भी अभी इसी समय। क्योंकि मुझे तत्काल ही यहाँ से दूर चले जाना है।

मेम साहिबा के पास जाने के पहिले स्वाभाविक रीति से मैंने जेब में हाथ डाला। वहाँ हार होने का मुझे विश्वास था। मगर सहज मानव स्वभाव के अनुसार मैंने हाथ डाला तो जेब खाली थी।

मेरा चेहरा पीला पड़ गया। जिस हार को पाकर मैं आधी रात में लौटाने दौड़ा आया था, जिसे लौटाकर मुझे शाबाशी की आशा थी, वह हार इस तरह देखते-देखते जेब से गायब हो गया! मेरी तो कुछ समझ में ही नहीं आ रहा था। अब मैं लाट साहब को क्या मुँह दिखाऊँगा। मैंने अपने-आपको और बेचारे सेक्रेटरी को भी कैसी विचित्र स्थिति में डाल दिया था! बिजली की तरह ये सब विचार मेरे दिमाग में उठने लगे। मैंने एक जेब टटोली, दूसरी टटोली, सभी जेबें टटोल डालीं, मगर हार वहाँ कहाँ था?

सेक्रेटरी भी समझ गया। बोला—क्यों स्लीमान? क्या हार नहीं है?

मुँह लटकाकर मैंने जवाब दिया—ना भाई! हार तो नहीं है। आकाश निगल गया, नहीं तो और क्या हो सकता है? एक पल पहिले हार था।

'अब क्या किया जाये ?' उसने पूछा।

'चुल्लू-भर पानी में डूब मरें और क्या ?'

तभी बँगले के अन्दर की ओर से सहसा समरसिंह ने तेजी से आकर कहा—मुझे मालूम नहीं था कि अँग्रेज भी चोरी करते हैं।

मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। समरसिंह ऐसे सुरक्षित बँगले में यहाँ तक कैसे आ गया ? और उसने एक गोरे अफसर पर इतना संगीन आरोप लगाने का साहस कैसे किया ?

'समरसिंह, आप भीतर कैसे आ गए ?' मैंने पूछा। मैं उसको बाहर बिठाकर लाट साहब के सेक्रेटरी के पास आया था।

'इस राजमहल में कभी-कभी ठगों की सत्ता भी चल जाती है और वह सत्ता अँग्रेजों को भी माननी पड़ती है। आपकी जेब में से सेक्रेटरी साहब के गोरे रक्षक ने हार चुरा लिया है। मैंने उसको पकड़ने का प्रयत्न किया तो उसने एक गोरी मेम को वह हार सौंप दिया। हार इस मकान में ही है।' समरसिंह की यह बात सुनकर मैं और सेक्रेटरी दोनो दिग्मूढ़ हो गये। यह सच था कि सेक्रेटरी के कमरे के दरवाजे पर एक गोरा रक्षक खड़ा था। इतने में पास के कमरे में से एक गोरी मेम निकल आई और तीखे स्वर में कहने लगी—आपको कुछ सुधि भी है या नहीं ? हार किधर है ? कहते हैं न कि हार लेकर आये हैं ?

'हार तुम्हीं ने छिपा रखा है मेम साहिबा; निकालकर हवाले करो।' समरसिंह ने डपटकर कहा।

१३ : विचित्र अनुभव

उस औरत का चेहरा मारे क्रोध के तमतमा उठा। वह चीखी—क्या तुम मुझ पर आरोप लगाते हो ? शर्म नहीं आती ? कर्नल स्लीमान, इस आदमी को अभी बाहर निकालो, नहीं तो मैं तुम सबको सजा दिलवाऊँगी ! यह मत भूलो कि मैं मेम साहिबा की सहेली हूँ।

हम सब घबरा गए। सेक्रेटरी के तो बेचारे के छक्के छूट गए। ऐसी उच्च पदस्थ महिला पर एक काले आदमी का इस तरह आरोप लगाना स्वयं सेक्रेटरी को भी बड़ा बुरा और अपमानजनक लगा।

लेकिन समरसिंह मेरी उलझन को ताड़ गया था। उसने कहा—साहब! आपको परेशान होने की कोई ज़रूरत नहीं। आप सेक्रेटरी महोदय को बता दीजिए कि आपने हार इन देवीजी को सौंपा है और फिर चलते बनिए।

समरसिंह की यह सलाह मुझे अच्छी नहीं लगी। पर ध्यान से देखा तो देवीजी के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। उधर सेक्रेटरी समरसिंह को धमकाने लगा। गवर्नर जनरल की पत्नी की सहेली पर कोई काला आदमी ऐसा आरोप लगाये, इसे कोई भी गोरा कैसे बर्दाश्त कर सकता था।

'आप फिजूल की बकवास कर रहे हैं। आपको इसका नतीजा मालूम भी है? आपका और स्लीमान साहब का क्या हाल होगा, यह भी जानते हैं?'

'मैं सब समझता हूँ इसी लिए तो इन देवीजी से विनय कर रहा हूँ। यदि विनय से काम न चला तो विवश होकर बलप्रयोग करना पड़ेगा।' समरसिंह बोला।

'बलप्रयोग करना पड़ेगा? यह क्या बकते हो?' गुस्सा होकर सेक्रेटरी ने फटकारा।

'क्या आप जानते हैं कि मैं कौन हूँ?' सुमरा ने जरा मुस्कराकर कहा।

'मुझे यह जानने की कोई परवाह नहीं। कर्नल, कौन है यह आदमी? इसको क्यों आने दिया?' सेक्रेटरी ने कहा।

'मैं ठग हूँ। आपके इस सारे महल को उड़ा देने की ताकत रखता हूँ! अगर इस औरत ने स्लीमान साहब के पास से चोरी किया हुआ हार नहीं लौटाया तो मैं इस सारे महल को जला डालूंगा।'

समरसिंह के कोमल मुख पर अब एकदम कठोरता छा गई थी। एकाएक वह अँग्रेज औरत अन्दर की ओर भागी। समरसिंह ने झपट-

कर उसे पकड़ लिया और हमारे कुछ सोचने के पहिले तो वह उसे घसीटता हुआ सेक्रेटरी के कमरे में ले भी आया। हम भी उसके पीछे लपके। इतने में समरसिंह ने पुकारकर कहा—साहब, अन्दर आइए!

सेक्रेटरी क्रोध से आगबबूला अन्दर आया। वह उस औरत के पक्ष में कुछ कहे उसके पूर्व ही समरसिंह ने कहा—हार मिल गया है।

मैंने पूछा—कहाँ है?

उसने जवाब दिया—इन्हीं मेम साहिबा के पास है। मैं तो पहिले से ही जानता था; सिर्फ यह मानती न थीं। अब कबूल करती हैं। क्यों मेम साहिबा, हार आपके पास है न?

हम सब के आश्चर्य के बीच उस महिला ने हार अपने पास होना स्वीकार किया।

'अब जाकर हार मिला है।' समरसिंह ने कहा।

'मगर जब तक मैं हार को देख न लूँ, मुझे यकीन न होगा।' मैंने कहा।

सेक्रेटरी ने भी हार देखने की इच्छा प्रदर्शित की। समरसिंह थोड़ा हिचकिचाया और अँग्रेज महिला की ओर मुड़कर बोला—हार निकालकर मेरे हाथ पर रख दीजिए।

'मैं दे दूँगी।'

'अपमान सहन करना पड़ेगा। आपकी देह पर ही हार है; निकाल कर दे दीजिए, नहीं तो मुझे तलाशी लेनी होगी।'

उस स्त्री ने मुड़कर बहुत तेजी से हार निकाल दिया। सेक्रेटरी आश्चर्यचकित-सा था। उस गोरे रक्षक का चेहरा भी उतर गया और महिला की निराशा का तो पार न था।

'सेक्रेटरी साहब, इस हार को अपने कब्जे में रखिए। इन दोनो को एक कमरे में बन्द कर दीजिए और सबेरे मेम साहिबा के जागने पर उनको हार सौंपने के बाद ही इन दोनो को छोड़िए। इन दोनो में से किसी को भी छोड़ा तो हार फिर गुम हो जायेगा। ये दोनो गोरे स्त्री-पुरुष हम ठगों से भी बड़े ठग हैं।'

यह कहकर समरसिंह ने हार सेक्रेटरी को दे दिया। मुझसे उसने कहा—साहब, अब हमें तत्काल चल देना चाहिए, जितनी देर होगी उतने ही हम पिछड़ जायेंगे।

मैंने सेक्रेटरी से कहा—मैं अब दो-तीन मास तक नहीं आ सकूँगा। बड़ा जरूरी काम है, इसी लिए मैंने आपको अभी रात में तकलीफ देना उचित समझा।

और फिर मैं और सुमरा वहाँ से चल पड़े। मुझे तो बड़ा आश्चर्य हो रहा था कि यह सब क्या तमाशा हो गया।

करीब एक घंटे तक चलकर हम शहर से बाहर निकले और एक मैदान में पहुँचकर खड़े हो गए।

मैदान के एक ओर से दो आदमी घोड़े लेकर आते दिखाई दिये। थोड़ी ही देर में घोड़े नजदीक आ गए।

'साहब, आप एक जानवर पसन्द कर लीजिए।'

दोनो घोड़े बहुत तेज थे। मैंने एक घोड़ा ले लिया और सुमरा ने दूसरा और तब हम दोनो सवार होकर आगे बढ़े।

हमने करीब एक सप्ताह तक यात्रा की। रास्ते में जंगल के किनारे किसी झोपड़ी में हम रात को सो जाते। इन झोपड़ियों में अन्दर की ओर गुफाएँ बनी होती थीं और उनमें रहने लायक कमरे भी होते थे। कमरों में सजे-सजाये कीमती बिस्तरे, बरतन, खाने-पीने का सामान आदि सब सुविधाएँ विद्यमान रहती थीं।

यह देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैंने एक दिन समरसिंह से पूछा—क्या ये सब आप ठग लोगों के अड्डे हैं?

'जी हाँ।' समरसिंह ने कहा।

चलते-चलते हम एक शहर में पहुँचे। अँग्रेजों की सैनिक छावनी के पास एक खस्ताहाल पुरानी मस्जिद के पास हम आये। मस्जिद से सटी हुई एक झोपड़ी थी। वह झोपड़ी भी आधी गिर चुकी थी। उसमें एक छोटा-सा दीपक जल रहा था। झोपड़ी के अन्दर एक बूढ़ा फकीर मूंगे की माला लिये बैठा था। झोपड़ी का दरवाजा आधा खुला था।

'साहब, यहीं उतर जाइए।' यह कहकर समरसिंह नीचे उतरा, उसके साथ-साथ मैं भी उतर पड़ा। फकीर को हमने प्रणाम किया। उसने आशीर्वाद दिया और हमारे बैठने के लिए एक चटाई बिछा दी।

हमारी छावनी के बिलकुल नज़दीक इस तरह ठगों का अड्डा होगा यह तो हममें से किसी ने सोचा भी नहीं था। अब मेरी समझ में आया कि ठग लोग पकड़े क्यों नहीं जाते थे। हमारी सेना के बहुत-से सिपाही और अफसर उस बूढ़े फकीर को जानते थे। वह फकीर इतने वर्षों से यहीं जगह बनाकर रहता था; मगर उसकी और ठगों के सरदार की ऐसी गाढ़ी दोस्ती होगी, इसे कौन जानता था।

फकीर ने ताजे फल और सूखे मेवे हमको खाने को दिये। समरसिंह को दूर ले जाकर उसने कुछ कहा और मुझे भी भीतर ले गया। हम दोनो अन्दर के कमरे में सोये।

घंटे-दो घंटे तक मैं सोता रहा, फिर खटका होते ही मैं जाग पड़ा। देखा तो वह फकीर समरसिंह के साथ बातें कर रहा था। वह कह रहा था—तीन दिन में यज्ञ होनेवाला है, उसमें दो कुरबानियाँ होंगी, या तो घोड़ा बदल लो या इस गुप्त मार्ग से चले जाओ। अगर साहब को न ले जाना चाहो तो मैं उसकी देख-भाल कर लूँगा मगर तुम्हें तो जाना ही होगा। खोने को समय बिलकुल नहीं है।

मैं सुन रहा था। फकीर ने मुझे अकेला छोड़कर सुमरा से जाने को कहा, यह मुझे जरा भी पसन्द नहीं आया। मैं विरोध भी करता, मगर सोने का ढोंग करके कुछ अधिक जानने के उद्देश्य से चुप पड़ा रहा।

समरसिंह ने मुझे अकेला छोड़ना अस्वीकार कर दिया।

'घोड़ों को किसी के हाथ भेज दीजिए। साहब और मैं इस गुफा से होकर चले जायेंगे।'

'जो कुछ करना हो, जल्दी करो। परसों की रात बड़ी भयानक है। तो साहब को जगाऊँ?' फकीर पूछा।

'वह तो जागते ही होंगे।' यह कहकर समरसिंह हँसा। सचमुच मैं जाग रहा था। मैंने आँखें खोलकर उसकी ओर देखा।

'साहब ! मरने से डरते तो नहीं ?' समरसिंह ने कहा।

मैंने कहा—जरा भी नहीं।

'तो फिर चलिए, हमें अभी ही जाना होगा।'

हम तैयार होकर चले। गुफा के अन्दर से ही रास्ता था। करीब दो दिन तक हमें इसी तरह चलना पड़ा। किसी बावली या मन्दिर में इस तरह की गुफाओं के मुख निकलते थे। जरूरत होने पर सुमरा पहले जाता और जरूरी खबर लेकर लौट आता। इतनी लम्बी गुफा कैसे बनी, यह मेरे लिए बड़े विस्मय की बात थी। तीसरे दिन सवेरे हमने चिल्लाहट सुनी। समरसिंह का सौम्य और हँसता हुआ चेहरा एकदम कठोर हो गया। माथे पर का एक पत्थर उसने धीरे से खिसकाया और ऊपर चढ़कर बाहर देखा।

'बाहर चले आइए।' उसने ऊपर से ही कहा और छोटी खिड़की से वह बाहर निकल गया। उसके पीछे मैं भी निकल आया। मैंने अनुमान से जाना कि एक भयानक खोह के बीच हम खड़े थे।

फिर से जोर की चिल्लाहट सुनाई दी। समरसिंह की आँखें चमक उठीं। वह तेजी से ऊपर चढ़ गया। जिस मन्दिर में मैं पहले उतरा था उसी मन्दिर के एक भाग में, गुप्त मार्ग से हमने प्रवेश किया। बाहर की ओर से आती चिल्लाहट सुनाई पड़ रही थी। हमने शस्त्रों की खन-खनाहट भी सुनी। मन्दिर के एक कमरे में जाकर हमने काले कुरते पहने, मुँह पर नकाब डाले और हाथ में हथियार ले लिये।

'साहब, जान का जोखिम है। मगर बन पड़ेगा तब तक मैं आपको नुकसान नहीं पहुँचने दूँगा। आप मेरी हलचल पर ध्यान रखें और जरूरत पड़ने पर मेरा साथ भी दें।' समरसिंह ने कहा।

'यहाँ क्या होनेवाला है ?' मैंने धड़कते हुए हृदय से पूछा।

'बस देखते जाइए।'

इसके बाद हम कमरे से बाहर निकले और मन्दिर के विशाल खण्ड में आये। इसी ओर उस भयानक भवानी की मूर्ति स्थापित की हुई थी। आयशा मुझे पहिले-पहिल यहीं मिली थी।

हमारे-जैसे कपड़े पहना हुआ एक आदमी सामने दिखाई पड़ा। समरसिंह ने कुरता थोड़ा उठाया, घुटनों के बल बैठा और खड़े होते-होते हाथ से स्वस्तिक का चिह्न बनाया। मैंने भी वैसा ही किया। इस पर उस आदमी ने हम दोनो के लिए दरवाजा खोल दिया। हमने फिर एक जोर की आवाज सुनी।

'ऐन मौके पर आ पहुँचे।' बहुत धीमे से समरसिंह बोला और हम एक बड़े मैदान में उतर आये, जो चारों ओर पहाड़ियों से घिरा था।

मैदान में एक ओर पहाड़ी थी। और दूसरी ओर बड़े वेग से बहता हुआ पानी का झरना। ऐसे स्थान में करीब दो सौ आदमी हमारी ही तरह काले वस्त्र पहनकर बैठे थे। उनके बीच में दो स्त्रियों को खुले मुँह बिठाया गया था। मैंने फौरन दोनो को पहचान लिया।

उनमें एक आयशा थी और दूसरी मटिल्डा।

१४ : बलिदान की तैयारी

उन दोनो सुन्दरियों को विचित्र वेश-भूषा में देखकर मेरे रोंगटे खड़े हो गए। दोनो के बाल खुले थे। उनके ललाट पर लाल रंग का लेप लगा था, जो उनके सौन्दर्य को भयानक बना रहा था। उनके गले में कनेर पुष्पों की मालाएँ पड़ी हुई थीं। दोनो हाथ पीठ पीछे बँधे हुए थे।

आठ हथियारबन्द आदमी उन दोनो को घेरकर खड़े थे। हम भी धीमे-धीमे खिसकते हुए उस टोली में जा मिले। जैसे ही हम टोली में पहुँचे वहाँ उपस्थित सब लोगों ने नारा लगाया—जय भवानी!

समरसिंह ने भी उसमें अपनी आवाज मिला दी। मगर मैं पुकार न सका। फिर दो सौ आदमियों की टोली में से एक ऊँचा व्यक्ति खड़ा हुआ। उसने गम्भीर स्वर में बोलना शुरू किया :

'जितने भी हो सकते थे उतने नायक यहाँ इकट्ठा हुए हैं। आज हमें शोक के साथ एक कष्टदायी कर्त्तव्य पूरा करना है।'

थोड़ा रुककर नेता ने आगे कहा :

समरसिंह की अनुपस्थिति में मेम पर हाथ उठाना अधर्म है।

'सबसे पहिले दोनो स्त्रियों की अनामिका अँगुलियाँ काटकर उनके रुधिर से सबको टीका लगाने की मैं पुजारी को आज्ञा देता हूँ।'

मेरा हृदय जल उठा। कितनी भयानक क्रूरता है! थोड़ा समय बीत गया, मगर कोई पुजारी उठता हुआ नजर न आया।

'आप क्यों हिचकिचा रहे हैं? आयशा मेरी बहिन है। उसकी जान आपसे कहीं अधिक मुझे प्यारी है। मगर हमारी बिरादरी, हमारी मिल्लत और हमारा पंथ उससे भी प्यारा है। चल भोलानाथ, तू आगे बढ़।'

मैं समझ गया कि आदेश देनेवाला और कोई नहीं आयशा का भाई खान साहब ही था। शुरू-शुरू में आयशा और समरसिंह ने ही मुझे उससे बचाया था। तब एक हथियारधारी पुरुष ने अपनी नकाब उतार फेंकी। उसके ललाट में तिलक लगा था। गले में रुद्राक्ष की माला पड़ी थी। उसकी आँखें बड़ी भयानक थीं। उसके चेहरे से ऐसा मालूम पड़ता था मानो इस पुजारी के हाथों से कई मनुष्यों की बलि चढ़ाई गई हो। ठग लोगों में ब्राह्मणों की कोई कमी न थी। धर्म और बाह्य आचरण में एक-दूसरे से इतने भिन्न हिन्दू और मुसलमान इस तरह कैसे एक हो गए, यही मैं सोचने लगा। मैं समझ रहा था कि वह पुजारी अभी ही दोनो स्त्रियों की अँगुलियाँ काट डालेगा। मगर पुजारी नकाब उतारकर चुपचाप खड़ा रहा।

'क्या आज एक से अधिक फरमान की जरूरत होगी? खान साहब के हुक्म की उदूली करनेवाले बागी की गरदन मेरी तलवार के नीचे होगी।'

धमकी देनेवाली यह आवाज मुझे परिचित-सी लगी। कहीं आज़ाद तो नहीं बोल रहा था?

'खान साहब के हुक्म की अवहेलना इस टोली में कोई नहीं कर सकता। मैं आयशा को बलि चढ़ाने को तैयार हूँ। मगर यह गोरी मेम जिसकी क़ैदी है, वह समरसिंह यहाँ उपस्थित नहीं। उसकी अनुपस्थिति में इस अँग्रेज औरत पर हाथ उठाना अधर्म होगा।' पुजारी ने कहा।

आयशा की बलि चढ़ाने को तत्पर कठोर हृदय को धर्म-अधर्म की भावना में उलझता देख मुझे आश्चर्य हुआ।

'मेरे हुक्म की तौहीन ? मैं खुद मटिल्डा की अँगुली काटूँगा और दोनो औरतों के साथ इस कम्बख्त भोलानाथ को भी भवानी के आगे कुरबान कर दूँगा।' इतना कह खान साहब ने फुर्ती से कटार निकाली और मटिल्डा की ओर लपके। उन्होंने झपटकर, डर से अधमुई हो रही मटिल्डा की उँगली पकड़ ली।

'ठहरो !' सहसा मेरे पास बैठा हुआ समरसिंह गरज उठा।

सबकी आँखें हमारी ओर घूम गईं। खान साहब रुक गए—मानो उन्होंने समरसिंह की आवाज़ को पहचान लिया।

'खान साहब, माफ कीजिए ! आपके पवित्र हाथ से यह काम नहीं हो सकता। आपका हाथ तो अभय और वरदान देने के लिए अलग रखा गया है। अगर आप रुधिर बहायेंगे तो सारी बिरादरी अपवित्र हो जायेगी।' समरसिंह बोलता और आगे बढ़ता गया। यहाँ तक कि वह खान साहब के बिलकुल पास जाकर खड़ा हो गया। वातावरण बिलकुल निःस्तब्ध था। मगर वह शान्ति बड़ी भयानक मालूम पड़ रही थी। उस शान्ति के गर्भ में मुझे बिजलियों की चमक दिखाई दे रही थी।

'बेशर्म ! खान साहब का सामना करते शर्म नहीं आती ?' एक कद्दावर पुरुष ने जल्दी से समरसिंह के सामने आकर जोर से कहा।

समरसिंह ने जवाब दिया—खान साहब का सामना नहीं करता; उन्हें उनका धर्म समझाता हूँ।

'खान साहब को तू धर्म समझायेगा ?' कद्दावर पुरुष ने तिरस्कार से पूछा।

'हाँ। यही मेरा कर्तव्य है। जो भूले उसे मार्ग बताना मेरा फर्ज है।' समरसिंह ने कहा।

'मार्ग तू भूलता और दूसरों को भुलाता है। पापी को दंड देने में तू बीच में आता है। तू भवानी के प्रकोप को निमंत्रण दे रहा है।'

'जब से हम मार्ग भूले भवानी का कोप तभी से हम पर उतर चुका है। हमारे कितने नायक पकड़े गए, मालूम है ? दुर्गा, फिरंगिया, शमशेर, उमराव, अमीरअली, मक्खन....'

'और तेरे-जैसे नायक के रहते हम सब पकड़ लिये जायेंगे। तू इन सबका नाम क्यों गिना रहा है ? शर्म नहीं आती तुझे। गोरे साहब का आदमी बनकर तू हम सबको दगा दे रहा है।' उस कद्दावर पुरुष ने कहा। उसकी परिचित आवाज़ को पहचानने का मैं प्रयत्न कर ही रहा था कि इतने में समरसिंह ने अपने चेहरे पर की नकाब को उतार फेंका और नाम से सम्बोधित कर मुझे उस आदमी से परिचित किया।

'आज़ाद, यदि ऐसी बात है तो मुझी को बलि चढ़ा दो।'

'यह भी होगा। अभी तो फैसले के मुताबिक इन दोनो औरतों की कुरबानी होनी चाहिए।'

'मैं अपनी बिरादरी को याद दिलाता हूँ। हमारी पहली प्रतिज्ञा यह थी कि ठग कभी औरत पर हाथ नहीं उठायेगा; यही नहीं औरत के सामने कुदृष्टि भी नहीं डालेगा।'

'ऐसा किसी ठग ने किया है ?'

'जो पकड़े गए हैं, उनसे पूछो। मुगलानी, काली बीवी और राधा के खून उनके माथे पर हैं। नारी की हत्या को भवानी कभी माफ नहीं करती।' समरसिंह बोला।

आज़ाद ने भी अपनी नकाब उतार फेंकी और जवाब दिया—उसे याद करने से फायदा ? हमारी बिरादरी में शामिल होनेवाली औरत पर मर्द की ही तरह बिरादरी के कानून लागू होते हैं और इसी लिए ये दोनो औरतें कुरबान की जानी चाहिए।

'जब तक मैं जिन्दा हूँ तब तक नहीं। यह कहीं अच्छा होगा कि इन दो स्त्रियों को मारने के बजाय हम अपनी बिरादरी को ही तोड़ दें। खान साहब, हमारी बिरादरी अब स्त्रियों को मारती है, बच्चों की हत्या करती है और बालिकाओं को वेश्याओं के घर बेचती है। क्या हमने ऐसे कुकृत्यों के लिए बिरादरी बनाई थी ? हमने बिरादरी बनाई

थी राजा-महाराजाओं के जुल्म, अमीर-उमरावों की जबरदस्ती, कंजूस धनिकों के अत्याचार और अफसरों की रिश्वत-धाँधली को मिटाने के लिए। लेकिन शोक, इन बुराइयों को मिटाने के बदले हमीं गुनाहों में शरीक होने लगे! इससे तो अच्छा है कि हम जहर खाकर मर जायें। जब तक मैं जिन्दा हूँ अपनी नजरों के सामने किसी स्त्री को हैरान नहीं होने दूँगा।'

'तुझे हम अधिक जिन्दा रहने ही क्यों देंगे! कहिए खान साहब, हो इजाजत तो बन्दा आपका हुक्म बजा लाये।' आजाद ने कहा।

'समरसिंह की बात भी सुननी चाहिए। कायदे से वह बिरादरी का आखिरी उस्ताद है।' खान साहब बोले।

'लेकिन सारा झगड़ा तो मेरे और सुमरा के बीच में है। मैं कहता हूँ कि भवानी को औरत की कुरबानी दी जा सकती है, वह इससे मुत्तफिक नहीं होता। अगर हम दोनो लड़कर फैसला कर लें तो जो नतीजा निकलेगा वह बिरादरी के कानून के अनुसार सबको मानना पड़ेगा और एक मिसाल हो जायेगी। मगर मुश्किल यह है कि सुमरा हथियार को हाथ नहीं लगाता। ऐसे डरपोक के साथ कोई कैसे पेश आये?'

'आजाद! मैं तुझे बताता हूँ कि स्त्री या बालक पर हाथ उठाने-वाला कोई भी क्यों न हो, मैं उसके खिलाफ हथियार उठा सकता हूँ।' समरसिंह ने कहा।

समरसिंह को मैंने कभी शस्त्र का उपयोग करते देखा नहीं था। वह अपने पास कभी हथियार रखता भी नहीं था। फिर भी उसका साहस और बल प्रशंसनीय था। मुझे उसकी शक्ति का पूरा अनुभव था। बहुत से ठग सैनिक कहते थे कि सुमरा शस्त्र हाथ में लेकर अजेय हो जाता है। इसलिए सुमेरसिंह की यह बात सुनकर एक बार तो आजाद भी चौंक पड़ा। मगर आज वह अन्तिम फैसला कर ही लेना चाहता था। मटिल्डा और आयशा का बलिदान देने का सुझाव उसी का था। इसी भयानक काण्ड को रोकने के लिए सुमरा मुझे इतने वेग

से अपने साथ लाया था। आज़ाद सुमरा की गैरहाजिरी में इस कार्य को पूरा करना चाहता था। मगर सुमरा ऐन मौके पर आ पहुँचा और उसकी योजना में विघ्न पैदा हो गया। यह देख सुमरा-रूपी काँटे को हमेशा के लिए निकालने के उद्देश्य से आज़ाद ने यह तरकीब सोच निकाली थी।

एकदम अपनी तलवार सूँतकर आज़ाद सुमरा पर चढ़ दौड़ा। मैंने सोचा, सुमरा इस जबरदस्त प्रहार से जमींदोरत हो जायेगा। लेकिन लोगों ने साश्चर्य देखा कि खन्नाती हुई आज़ाद की तलवार पत्थर से टकराकर दूर पड़ी हुई है। सुमरा अपनी मधुर, मोहक पर भयानक मुस्कराहट के साथ निश्चिन्त खड़ा था। आज़ाद के वार का उसने निहत्थे ही सामना किया। बड़ी सीफत से अपने ऊपर के वार को बचाया ही नहीं, आज़ाद के हाथ से तलवार भी छुड़ा ली।

'आज़ाद, मैंने तो यह कहा था कि जो औरतों और बच्चों पर हाथ उठाता है मैं उसके सामने शस्त्र धारण करता हूँ। अपने ऊपर हाथ उठानेवाले के खिलाफ हथियार उठाने की बात कब कही थी?'

सब डर रहे थे कि आज बात कहीं बिगड़ न जाये। अगर सुमरा, आज़ाद और खान साहब आपस में लड़ पड़े तो सारी बिरादरी खतम हो जायेगी। आयशा को भी बिरादरी अपनी जान से प्यारी थी। वह बोल उठी—भवानी को मेरा भोग देने से अगर बिरादरी बच सकती हो तो मैं तैयार हूँ।

'स्त्री का भोग देने पर बिरादरी भस्म हो जायेगी, खान साहब। आज आज़ाद की इच्छा के अनुसार इस पार या उस पार फैसला कर ही लीजिए। मैं तो कहता हूँ कि अब अपनी इस बिरादरी को तोड़ ही डालिए। हम ठग रहे ही नहीं; हो गए हैं तुश्मबाज़, जिनका काम औरतों की अस्मत लूटना और बच्चों के गले घोटना है।' समरसिंह ने कहा।

'समरसिंह को उस गोरे साहब ने नवाबी या जागीर का लोभ तो नहीं दिया है?' कटार कमर में होने का विश्वास करके आज़ाद ने हँसते-हँसते कहा।

'क्या तुम नहीं जानते कि मेरे हाथ की मुट्ठी में एक नहीं अनेक सल्तनतें और जागीरें पड़ी हुई हैं ?' समरसिंह ने जवाब दिया।

थोड़ी देर के लिए सन्नाटा छा गया। बिरादरी को लिखने की बात ने सबको धक्का पहुँचाया था। सारा जीवन जिस पंथ को, जिस मार्ग को, जिस धर्म को समर्पित किया था उसी पंथ, मार्ग या धर्म से अलग होने की बात समरसिंह कह रहा था। यह कैसे हो सकता था ?

'समरसिंह ! तुम हद से बाहर निकले जा रहे हो।' खान साहब ने कहा।

'सो कैसे, खान साहब ?' समरसिंह ने पूछा।

'बिरादरी तोड़ने की बात करने लगे हो।'

'आप ही सोचिए, अब हमारा उपयोग क्या रहा ? कानून की ओट लेकर गरीबों को लूटनेवाले धनिक के धन को छीनने के बजाय हम तो धनिक और गरीब सभी को लूटने लगे हैं।'

'इसको हम बन्द करा देंगे।'

'अपने राज्यों की हम कोई सहायता नहीं कर सकते। पेशवाई चली ही गई, छत्रपति गये, मुगलाई भी मरने की तैयारी कर रही है और हम गोरों से डरते हुए अपने ही भाइयों को मारते हैं। आज़ाद मेरे ऊपर हथियार उठाता है। वह दिल्ली की रक्षा के लिए क्यों नहीं जाता ? क्यों वह अँग्रेजों को परेशान नहीं करता ?'

'मगर तू क्या करता है ? तू खुद तो गोरों को बचाता फिरता है। तेरी ही खातिर तो आयशा की कुरबानी करनी पड़ रही है !' आज़ाद ने कहा।

'वह गोरा यहाँ भी हो सकता है; मगर हमारा कानून है कि शरण में आये दुश्मन को हम मार नहीं सकते। दुश्मनों को देश से बाहर करने की हमारी प्रतिज्ञा होते हुए भी देशी राज्यों को एक-एक कर फिरंगियों के हाथों में जाने दे रहे हैं। अब हमारा उपयोग ही क्या रहा ?'

'मगर ये सब बड़े काम तो तेरे जिम्मे थे। तू ने क्या किया ?' आज़ाद ने पूछा।

'नेपाली गुरखों और पंजाब के सिखों की जागृति को देखो; हिन्द के बाहर नजर डालो, सारे देश में तैयार की हुई मेरी सैनिक टुकड़ियों को याद करो; फिर मुझसे पूछना कि मैंने क्या किया और क्या नहीं ? इधर की देखभाल तुझे सौंपी थी, सो तू किसी का हार चुराने लगा, तो दो राज्यों को आपस में लड़ाने लगा। कुछ न हुआ तो किसी यात्री-संघ को लूट लिया और इससे भी आगे बढ़ा तो अँग्रेज औरत पर कुदृष्टि डाली। कालिका के मंत्र का पाठ करनेवाला एक महानायक जब इस तरह के काम पर उतर आये तो बेहतर है कि हम डूब मरें !' समरसिंह जरा उत्तेजित हो उठा था।

आजाद की आँखों में चमक दिखाई दी। सूरज अब माथे पर आ गया था। उसने कहा—तो आज हम बिखर जायें। कल भवानी को चिट्ठी डालकर या उसकी वाणी सुनकर कुरबानी देने, या न देने के बारे में तय करेंगे।

'चिट्ठी डालने की या भवानी की वाणी सुनने की कोई जरूरत नहीं है। हम भोग नहीं दे सकते।' समरसिंह ने कहा।

'अभी अगर इस बात को हम तय न करें, तो ?' खान साहब ने कहा।

'जरा इन दोनों लड़कियों की तकलीफ और तड़प का भी तो ख्याल कीजिए !' समरसिंह ने कहा।

'हमारा कोई ख्याल मत कीजिए। अगर भवानी की कृपा होगी और उन्हें बिरादरी की बढ़ती मंजूर होगी तो आज के बदले कल मौत देखेंगे।' आयशा बोली। मौत से भी शान्तिपूर्वक टक्कर लेनेवाली युवती को देखना जीवन का एक महान दृश्य है।

'अच्छा, तो खान साहब की आज्ञा के अनुसार ही हो।' समरसिंह बोला। और आयशा तथा मटिल्डा के आसपास तलवारें लेकर खड़े हुए जल्लादों की तलवारें म्यान में चली गईं। कई ठग-नायकों ने अपनी नकाबें उतार लीं और खड़े होकर इधर-उधर घूमने लगे।

१५ : ठग संगठन की आखिरी साँस

आज़ाद के चेहरे पर उतना आनन्द क्यों था ? समरसिंह के चेहरे पर अब भी उल्लास क्यों नहीं दिखाई पड़ता था ? सब-कुछ समाप्त हो जाने के बाद भी ये दो सवाल मुझे सता रहे थे।

'चलिए ! अब भवानी की प्रार्थना करके आज का दिन गुजारें।' खान साहब ने कहा। और सब लोग धीरे-धीरे गु· मार्ग से मन्दिर की ओर चल पड़े।

'हम थोड़ी देर के बाद जायेंगे।' समरसिंह ने मेरे पास आकर कहा।

'क्यों ?' मैंने पूछा।

'हमारा सबके बाद में जाना ही अच्छा होगा।' समरसिंह ने कहा।

उसके इस कथन का कारण मेरी समझ में नहीं आया। किसी भी तरह मटिल्डा को बचाने का मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया था। समरसिंह आयशा और मटील्डा के ही लिए तो इतनी दूर आया था।

'वे दोनो कहाँ जा रही हैं ?' मटिल्डा का हाथ पकड़कर आयशा को झरने की ओर जाते हुए देखकर मैंने पूछा।

'इन दोनो को अब स्नान करना होगा। बलिदान के लिए निश्चित व्यक्ति बिना स्नान किये वापस नहीं आ सकता।' समरसिंह ने उत्तर दिया।

बिखरती हुई टोली में से कौन किधर जा रहा था, यह अन्दाज़ लगाना मुश्किल ही था। समरसिंह चौकन्नी निगाहों से अपने चारों ओर देखता जा रहा था। बात वह मेरे साथ कर रहा था, मगर मन उसका कहीं और ही लगा हुआ था।

दोनो युवतियाँ आँख से ओझल हो गईं। तेज बहाववाले झरने के किनारे किसी टेकरी की ओट में स्नान करती होंगी, ऐसा मैंने सोचा। अब बहुत थोड़े आदमी वहाँ रह गए थे। इतने में एक भयानक चीख सुनाई दी। मुझे लगा कि वह चीख मटिल्डा की थी। तभी आज़ाद का क्रूर अट्टहास भी सुनाई पड़ा। झरने की ओर देखता हूँ तो आयशा

उसकी तेज धार में बही चली जा रही थी। सभी उपस्थित व्यक्ति भय और आश्चर्य से स्तब्ध रह गए। मन्दिर की ओर जाते हुए लोग दौड़कर उधर आने लगे। मटिल्डा, पहाड़ी की ओट से भीगे हुए वस्त्रों के साथ बाहर निकल आई।

मैंने नकाब उतार फेंकी और मटिल्डा की ओर लपका। प्रवाह के साथ बहती हुई आयशा पानी में छटपटाती और अधिक गहरे पानी में खिंची जा रही थी। अभी लोग उसे बचाने की तरकीबें सोच ही रहे थे कि समरसिंह पहने हुए वस्त्रों के साथ झरने में कूद पड़ा।

झरने में अच्छे-अच्छे तैराकों को भी मुसीबत में डालनेवाले भयानक भँवर थे। आयशा को बचाने के लिए समरसिंह अपने-आपको इस तरह खतरे में डालेगा, यह तो किसी ने सोचा भी नहीं था। एक तो पहाड़ी झरना, उसके अन्दर खोह, और चट्टानों का डर, फिर तेज बहाव—तैराक का अपने-आपको सँभालना ही मुश्किल तो दूसरे को बचाने का सवाल ही कहाँ उठता था। सब के मुख पर व्यग्रता दिखाई देने लगी; मगर समरसिंह ऐसे बढ़ रहा था मानो पानी के तूफान पर भी उसका काबू हो। करीब सौ फुट जाकर उसने आयशा को पकड़ लिया। अब कहीं जाकर सबके जी-में-जी आया, मगर दोनो को बाहर कैसे निकाला जाये? सामने बिलकुल सीधी खड़ी पहाड़ी थी; दूसरी ओर धारा का तेज प्रवाह! तभी पहाड़ी की ओट से निकलकर आज़ाद ने धनुष पर तीर चढ़ाया।

पलक झपकते में सारी स्थिति मेरी समझ में आ गई। अवश्य उसी ने आयशा को झरने में फेंका होगा। अब समरसिंह का उसे बचाना वह कैसे सह सकता था? आज़ाद का तीर समरसिंह या आयशा दोनो में से किसी को भी लगा तो उसके प्राण बचना असम्भव थे। मैंने सुन रखा था कि उसका निशाना अचूक होता है। सहसा कुछ कर गुजरने को मैं व्यग्र हो उठा। समरसिंह या आयशा या दोनो ही की मदद करने का सिर्फ यही एक मौका था। उन्होंने कई बार मेरी जिन्दगी बचाई थी। इसलिए पास में खड़ी मटिल्डा को अकेली छोड़ पाँच

छलाँगों में मैं आज़ाद के पास पहुँच गया। वह निशाना साधने में तल्लीन था, इसलिए उसका ध्यान मेरी ओर नहीं गया।

जैसे ही उसने धनुष की डोरी खींची मैंने लपककर उसे अपनी बाहों में जकड़ लिया। उसका हाथ हिला और लक्ष्य भ्रष्ट हो गया।

'साहब, जिन्दा रहना चाहते हो तो मुझे छोड़ दो।' आज़ाद ने मुझे पहचान कर कहा।

'अब जिन्दगी की परवाह नहीं है।' मैंने उत्तर देते हुए अपनी पकड़ को और मज़बूत किया।

'साहब, ठग लोगों को पकड़ना चाहते हो तो मेरे रास्ते से हट जाओ।' आज़ाद ज़ोर लगाकर मेरी पकड़ से छूट गया और बोला। मुझे आश्चर्य हो रहा था कि उसमें इतनी शारीरिक ताक़त कहाँ से आई।

'कोई हर्ज नहीं अगर ठग पकड़े न जायें। अपने देखते हुए इस तरह मुसीबत में फँसे हुए लोगों को मैं मरने नहीं दूँगा।'

'पकड़िए इस गोरे को।' आज़ाद ने पास में आये हुए कई ठग नायकों को हुक्म दिया और फिर से अपना धनुष-बाण तैयार किया। लेकिन पकड़े जाने से पहिले ही मैंने आज़ाद पर आक्रमण कर दिया। इस बार मेरी जान जाने में कोई कसर न थी, क्योंकि मुझे पास में आता देख आज़ाद ने अपनी तलवार उठाई और वार कर दिया।

यह वार इतना आकस्मिक था कि मैं बचाव के लिए हथियार भी नहीं निकाल पाया। आज़ाद की आँखें अंगारों की तरह जल रही थीं। मगर मेरी देह और तलवार के बीच सहसा एक चौड़ी ढाल बिछ गई। मैं बच गया। तलवार ढाल से टकराकर रह गई।

मैंने तेज़ी से मुड़कर अपनी जान बचानेवाले की ओर देखा। वह मेरा वफादार नौकर दिलावर था।

'क्या इसी लिए मैंने तुझे साहब को सौंपा था? बेईमान कहीं के तू भी....' आज़ाद ने क्रोधोन्मत्त होकर दिलावर पर आक्रमण किया। मगर ठीक उसी समय पहाड़ी की बाजू में से एक भयानक बाघ गुर्राता हुआ, ज़मीन पर पूँछ पटकता निकल आया। उसने अपना विकराल मुख

एक बाँध गुरीता हुआ निकल आया।

आज़ाद की ओर घुमाया। आज़ाद वहीं-का-वहीं रुक गया। अकस्मात् निकल आये इस शेर ने सबके हृदयों को भय-विकम्पित कर दिया। आज़ाद एक ओर हट गया। गटिल्डा मारे भय के चीख भी न सकी। दिलावर थोड़ा पीछे हट गया। और मेरी समझ में न आया कि क्या करूँ और क्या न करूँ!

'राजुल!' झरने में से एक आवाज़ सुनाई दी।

मुझे तुरन्त समरसिंह के साथ अपनी पहिली मुलाकात याद हो आई। शेर ने आवाज़ सुनते ही मुँह झरने की ओर घुमाया और आँखें झपकाकर दहाड़ उठा।

'बैठ जा, बच्चा!' झरने में से समरसिंह ने पुकारा।

आज्ञापालक शेर जमीन पर बैठ गया। शेर ने दिलावर को आज़ाद के हमले से बचा लिया था। आज़ाद ने तलवार और तीर-कमान फेंक दिये और बोल उठा—बस, अब सब ख़तम हो गया।

फिर वह भी शेर के पास ही बैठ गया। उसे इस तरह हथियार डालकर शेर के पास बैठते देख उसकी हृदयगत दृढ़ता के बारे में मैं धन्य-धन्य कर उठा।

उधर समीर आयशा को लिये झरने से बाहर आने का भगीरथ प्रयत्न कर रहा था। पहले उसने आयशा को किनारे लगाया और फिर स्वयं निकल आया।

किसी ने कहा—तीस हाथ का झरना कितनों को डुबा देता है!

'साढ़े तीन हाथ की देह अगर सारी बिरादरी को डुबा देती है तो तीस हाथ का तो कहना ही क्या?' समरसिंह ने देह से पानी निचोड़ते हुए कहा।

सारी टोली ने समरसिंह को घेर लिया। सिर्फ आज़ाद और बाघ दूर बैठे रहे।

आयशा भीगे हुए वस्त्रों के साथ पत्थर पर बैठ गई। उसके ललाट का कुंकुम पानी से द्रवित होकर सारे मुख को लाल गुलाल कर रहा था। उसके चेहरे पर थकावट थी, घबराहट नहीं।

'मटिल्डा किधर है ?' आयशा ने पूछा।

मटिल्डा मेरे पीछे ही खड़ी थी। वह आगे आई।

'आओ, बहन !' आयशा ने कहा। मटिल्डा उसके पास बैठ गई और आयशा के मुँह की ओर देखने लगी। पल-भर में तो उसकी आँखों से आँसू बहने लगे।

'अरे, रोती क्यों हो बहन ! कल तो और भी भयानक काण्ड होगा। मैंने एक ठग कुटुम्ब में जन्म लिया, इसलिए भवानी का भोग बनना पड़ा। तुम उनके दुश्मन के घर में पैदा हुई इसलिए तुम्हें भी भोग बनना पड़ा। स्त्री-जाति को एक या दूसरे ढंग से भोग बनना ही होता है। वह जन्म लेती ही इसलिए है।' आयशा हँसकर बोली।

'भवानी को आगे से एक भी भोग नहीं दिया जायेगा।' समरसिंह ने कहा।

'ऐसा कैसे हो सकता है ? यह तू नास्तिक की तरह क्यों बोल रहा है ?' एक वृद्ध नायक ने कहा।

'भवानी कभी स्त्री का बलिदान स्वीकार नहीं करती। हमारा यह पहला नियम है। हाँ, अगर किसी सर्वगुण-सम्पन्न बत्तीस लक्षणोंवाले नरश्रेष्ठ का बलिदान दिया जाये तो भवानी अवश्य प्रसन्न होंगी।' सुमरा ने कहा।

'ऐसे नरश्रेष्ठ तो हमारे बीच दो ही हैं—एक आजाद और दूसरा सुमरा।' तीसरा आदमी बोल उठा।

'इन दोनों की बलि चढ़ा दी जाये तो शान्ति हो जाये और भवानी प्रसन्न हो उठें।' समरसिंह ने हँसकर कहा।

'और सारी बिरादरी खतम हो जाये !' खान साहब ने कहा।

'मुझे तो यही लगता है कि आज आजाद और सुमरा—दोनों का बलिदान हो गया और अपनी बिरादरी नष्ट होने से बच गई।' समरसिंह ने कहा।

मेरी समझ में यह बात नहीं आई। मैंने समरसिंह की ओर देखा।

समरसिंह बोला—साहब, आज सरकार में एक खरीता भेजिए और उसमें लिखिए कि ठगों की टोली का नाश हो गया।

'क्यों ? कैसे ?' मैंने पूछा।

'दोनो भयंकर ठगों का भवानी को भोग दिया गया। अब जो बाकी रहे उनको पकड़कर या तो फाँसी पर लटका दीजिए या तो अच्छे नागरिक बनाकर छोड़ दीजिए। आज हमारी टोली बेकार-सी हो गई है।' समरसिंह ने कहा।

'मेरी समझ में तो कुछ नहीं आता। तुम कैसे ठग हो ? मेरी रक्षा क्यों की ? मैं बिलकुल उलझन में पड़ गया हूँ।' मैंने जवाब दिया। यह कथन मेरे हृदय के सच्चे भावों को व्यक्त करनेवाला था। सचमुच मैं इस विचित्र टोली को देखकर उलझन में पड़ गया था।

'जैसा देख रहे हैं वैसा ही लिखिएगा, साहब ! सब समझ में आ जायेगा।'

'जब आपकी कैद से छूटूँगा तभी न लिखूँगा। पहले कैसे लिखूँ ?' मैंने जवाब दिया।

'आपको तो मैंने कभी कैद किया नहीं। आप स्वतंत्र हैं—आजाद हैं। अरे, वह आजाद किधर गया ?' समरसिंह ने पूछा और पीछे की ओर देखा।

आजाद और शेर एक-दूसरे के पास चुप बैठे थे। ऐसा लग रहा था मानो आजाद पहाड़ी से लगकर समाधि में लीन बैठा हो।

समरसिंह उसके पास गया। शेर ने फिर दहाड़कर और अपनी दुम हिलाकर सबको आतंकित करते हुए अपनी प्रसन्नता व्यक्त की।

'राजुल, बेटा, तू भी मनुष्य बन गया। अहिंसा को अपना लिया।' समरसिंह ने कहा।

उसी क्षण आजाद ने आँखें खोलीं।

'आजाद ! नींद आ रही है क्या ?' समरसिंह ने पूछा।

'नहीं तो आजाद अब जाग गया है।' आजाद ने कहा।

'तो आओ चलें, यहाँ बैठे क्या करते हो ?'

'किधर चलूँ ?'

'हम साथ रहने को पैदा हुए हैं। चल, मेरे साथ चल।' रामरसिंह ने आज़ाद का हाथ थामा और उसे खड़ा किया। दूसरा हाथ उसके गले में डालकर वह बोला, 'चल, दोस्त ! पैर उठा।'

'जय भवानी !' किसी ठग ने पुकारा।

सारी बिरादरी ने समवेत स्वर में दुहराया—जय भवानी !

१६ : ठगों का हृदय

मन्दिर में अँधेरा तो अवश्य था, पर इतना नहीं कि देखने में बाधा पड़े। वहाँ पहुँचने के बाद धीमे-धीमे मेरी आँखें अन्धकार की अभ्यस्त हो गईं और मन्दिर की सारी चीजों को मैं देखने लगा।

सब-के-सब मन्दिर में आकर बैठ गए थे। भवानी की महाकाय मूर्ति धुँधले प्रकाश में भयानक मालूम पड़ रही थी। मूर्ति के आगे घी के दीपक जल रहे थे और उसकी भयानकता को बढ़ा रहे थे। पास में पुजारी खड़े थे। पुजारी के पास आयशा और मटिल्डा खड़ी थीं।

'माताजी आज मानव बलिदान नहीं लेंगी।' पुजारी ने प्रसन्न होकर कहा।

'कल भी नहीं लेंगी।' आज़ाद ने कहा।

'जय भवानी !' सबने जोर से जयकार किया और खड़े हो गए। फिर माता की भयंकर मूर्ति को प्रणाम कर सब एक गुप्त द्वार से बाहर जाने लगे।

मैंने जाते-जाते समरसिंह से पूछा—क्या ये मुसलमान भी माताजी को प्रणाम करते हैं ?

'सिर्फ मन्दिर में ही नहीं मन्दिर के बाहर भी। बिरादरी में हिन्दू-मुसलमान का कोई भेद नहीं है।'

'और फिर भी हिन्दू हिन्दू हैं और मुसलमान मुसलमान ?'

'अवश्य ! मैं एकपल के लिए भी हिन्दू नहीं मिटता और खान साहब एक पल के लिए भी मुसलमान नहीं मिटते।'

'यह, कैसे हो सकता है ?'

'अगर हमारे पन्थ को समझ लें तो आप ईसाई भी इसमें शामिल हो सकते हैं।'

'मगर आप तो बिरादरी को तोड़ देना चाहते हैं।' मैंने कहा।

'जी हाँ ! बिरादरी की शुद्धि के लिए मैं प्रयत्न कर रहा हूँ। बाकी, हमारी बिरादरी तो कायम है। और रहेगी।

'यह मेरी समझ में नहीं आया।'

अब मैं और समरसिंह भी गुप्त मार्ग से बाहर निकले। जहाँ हम आये वह जगह महल-जैसी लग रही थी। उस महल के चौक में थालियाँ परोसी रखी थीं। जितने ठग वहाँ आये वे सब भोजन करने को बैठ गए। बाद में समरसिंह मुझे एक कमरे में ले गया। वहाँ पलंग बिछा हुआ था। उसने मुझे लेटने को कहा। मैं लेट गया, क्योंकि शरीर को आराम की अत्यन्त आवश्यकता थी। इतना थका हुआ था कि लेटते ही तत्काल नींद आ गई।

पूरी नींद लेने के बाद जब मैं जागृत हुआ तो दो आदमियों को बात करते सुना। मैं समझ गया कि समरसिंह और आजाद बातें कर रहे हैं। मैंने आँखें नहीं खोलीं, क्योंकि उनकी बातचीत बन्द हो जाने का डर था।

'मैं फकीर बनना चाहता हूँ।' आजाद ने कहा।

'यही तो तुम गलती करते हो। तुम्हें मालूम नहीं कि आयशा को मैंने कितना समझाया। शायद वह राजी भी हो जाये।' समर ने कहा।

'यह तो तुम्हारी सरासर बेवकूफी है। आयशा मुझसे कभी प्रेम नहीं करेगी।'

'क्यों ?'

'क्योंकि वह तुम्हें प्यार करती है। क्या तुम्हें मालूम नहीं कि वह तुम्हारे लिए कितना कुछ सहन करती है ?'

'सब जानता हूँ। मगर यह भी जानती है कि मैंने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत लिया है।

'व्रत की बात जाने दो। तुम्हारे जैसे दो प्रेमियों का शादी के बन्धन में बँधना व्रत का सुफल ही होगा। अब मुझे जरा भी ईर्ष्या नहीं है। आयशा को पानी में धकेलने के बाद ही मैंने जाना कि मेरे प्रेम में कंजूसी की कंजूसी है। कंजूस के धन की तरह ईर्ष्यालु प्रेम भी निकम्मा होता है। इसी लिए तो मैं आदर्श ठग न बन सका। अब मैं फकीर बनकर पश्चाताप करूँगा।'

'मैंने तुम्हारा असली रूप अब जाना है। तुमने कुछ भी क्यों न किया हो, लेकिन तुम्हारे हृदय में जो मर्दानगी और उदारता है उसका मैं पुजारी हूँ। इसी लिए मैंने हथियार न उठाने का व्रत लिया था। अगर मैंने भी शस्त्र धारण किया होता तो आज तुम और मैं दो भाइयों की तरह बैठे नजर न आते।'

थोड़ी देर के लिए कमरे में शान्ति छायी रही। मेरी आँख खुल गई। समरसिंह ने तुरन्त देख लिया और बोला—क्यों साहब, नींद तो अच्छी आई न?

'हाँ!' मैंने कहा।

'अब आप निश्चिन्त सो सकेंगे। ठग लोगों के संगठन को आपने बिखेर दिया है।'

'क्या मैंने बिखेर दिया?' उठकर साश्चर्य मैंने पूछा।

'जी हाँ! आपने कई ठगों को पकड़ा है, कइयों के बयान लिये हैं, और कइयों को फाँसी पर लटकाया है।' कहते-कहते समरसिंह की आँखें चमक उठीं।

'मगर अभी तो आप हैं, आजाद हैं, और मेरे अनुभव के अनुसार गाँव-गाँव और शहर-शहर में आपके थाने हैं।'

'उन थानों को अब उठा लिया जायेगा।'

'क्यों?'

'अब उनकी जरूरत नहीं रही।'

'जरूरत ? ठग लोगों के थानों की ?'

'जी हाँ ! हमारा धर्म तो अमर है और अमर रहेगा। आवश्यकता होते ही हम धरती के पेट से भी निकल आयेंगे काम और करने लगेंगे।'

'जरा विस्तार से समझाइए कि ठगों का धर्म क्या है ?'

'जब तक आप हमारे साथ घुल-मिल नहीं जाते आपको हमारा धर्म समझ में नहीं आ सकता। हमारे बारे में गलतफहमी न हो और साथ ही चेतावनी दी जा सके, इसलिए आपको हमारे गुप्त जीवन में थोड़ा प्रवेश करने दिया है।'

ठग लोगों की ओर आरम्भ में तिरस्कार का जो भाव मेरे मन में था वह थोड़े दिनों के अनुभव से कम हो गया था। एक अँग्रेज होने के नाते मुझे जो गर्व था वह भी ठगों की व्यवस्था और विधान को देखकर कम हो चला था।

मेरा विश्वसनीय अंगरक्षक दिलावर भी एक ठग था। लाट साहब की पत्नी की सहेली भी ठग लोगों के असर में थी। उनकी उदारता और साथ ही अपनी सगी बहन की बलि चढ़ाने की निष्ठुरता, ये ऐसी बातें थीं जो मुझे विस्मय में डाल देती थीं। समरसिंह और खान साहब शालीन और संस्कृत पुरुष थे। उनकी बातचीत और व्यवहार किसी भी सभ्य गृहस्थ से कम न था। आजाद की वीरता और उसका प्रतिशोध उसे फकीरी की ओर ले जा रहे थे। आयशा और समरसिंह की नाटकीय घटना तो मेरे मानस-पटल पर सदा के लिए अंकित हो गई थी। शायद ही मैंने दोनो को परस्पर आँख मिलाते देखे होगा।

'और सब-कुछ तो मैं समझ गया, पर यह चेतावनीवाली बात मेरी समझ में नहीं आई।' मैंने कहा।

'मैं समझाता हूँ। आप यह तो जानते हैं न कि ठग लोगों ने किसी भी गोरे पर कभी वार नहीं किया।' समरसिंह ने कहा।

मैंने उसकी बात काटते हुए कहा—मटिल्डा को तो उठाकर ले आये।

'सच है। लेकिन वह भी एक चेतावनी के ही रूप में। प्लेफर साहब के गुण-दोषों के बारे में तो आप भी जानते ही होंगे।'

मेरा वह पूर्व अधिकारी चतुर होते हुए भी इतना विलासी था कि उसकी विलासप्रियता हम लोगों के मजाक का विषय बन गई थी। देशी स्त्रियों के प्रति उसकी अनुरक्ति की बात उसकी पत्नी को भी मालूम थी। अपने सैनिक अधिकारों के जोर पर वह स्त्रियों को उठवा मँगवाता था। अपनी इस विलासिता का उसे फख्र भी बहुत था।

समरसिंह की आँखों में चमक दिखाई दी और उसने कहा—जब काली स्त्रियों की ओर आँख उठाई जा सकती है तो गोरी स्त्रियों की ओर क्यों नहीं? हम ठग लोगों का तो बस एक ही धर्म है। जगत में धन या सत्ता के बल पर खुली लूट करनेवालों को हम बार-बार सचेत करते रहते हैं कि यह खुली लूट अनेक छिपी लूटों को जन्म देती है। अच्छा हुआ कि मटिल्डा हम भारतीय ठगों के हाथ पड़ी। इसी लिए वह अब तक अँग्रेज बनी रही। प्लेफर साहब को यह बात समझाने के लिए ही हमारी बिरादरी उसकी पुत्री को उठा लायी थी।'

'क्या इस बात को कबूल करने से आपको सजा नहीं मिलेगी?' मैंने कुछ गम्भीर होकर पूछा।

'क्या आप मानते हैं कि ठग बिरादरी को सजा का डर है? हम मनुष्य की दी हुई सजा से नहीं डरते। बिरादरी को बचाने के लिए कई बहादुर ठग जान-बूझकर झूठे गुनाहों को अपने सिर ओढ़कर फाँसी पर चढ़ गए हैं। और यह बात आप भी जानते हैं। हम सिर्फ एक ही सजा से डरते हैं, और वह है धर्म से च्युत हो जाने पर भवानी का कोप।'

'ठीक है। मटिल्डा के अपहरण की वास्तविकता मेरी समझ में आ गई। किसी ठग स्त्री के साथ किये गए अपमान और अत्याचार का वह बदला था। मगर आप कहते हैं कि गोरों पर आपने कभी हाथ नहीं उठाया, सो क्यों?'

'गोरों की विजय में उनका अपना कोई दोष नहीं है। उनकी योग्यता सचमुच ऊँचे दर्जे की है। हम अपने अवगुणों के कारण ही पराजित होते हैं। दोष हमारा ही है तो फिर गोरों को क्यों मारा जाये?'

'मगर आप लोग तो बहुत-से निर्दोष भारतीयों को भी मार डालते हैं।'

'नहीं, कभी नहीं। हमारी बिरादरी की एक टुकड़ी हमेशा यह देखभाल करती रहती है कि कभी भूलकर भी किसी निरपराध की हत्या न हो या उसकी जायदाद न लूट ली जाये।'

इतने में समीप ही कहीं सितार बजने की आवाज सुनाई दी।

'क्या ठगों में गायक और कलाकार भी होते हैं?' मैंने पूछा।

'जी हाँ! हमारे कई संगीतज्ञ तो राज-दरबारों में रहते हैं।'

'अच्छा, ऐसी बात है।'

'जी हाँ, स्वयं आज़ाद एक अच्छा बीनकार है।'

'आज़ाद और बीनकार?' मेरे आश्चर्य की सीमा न रही। 'ऐसा लड़ाका, साहसी और क्रूर बीन को पकड़ ही कैसे सकता है?'

'इसमें आश्चर्य की तो कोई बात नहीं। हममें से प्रत्येक को कोई-न-कोई ललित कला आनी ही चाहिए। मैंने जब शस्त्र का परित्याग किया तो आज़ाद ने उसी रोज से बीन का त्याग कर दिया। मैं तो शस्त्र धारण नहीं करूँगा। मगर आज़ाद के हाथ में बीन जरूर पकड़ाऊँगा।'

आज़ाद ने विषादपूर्ण नेत्रों से समरसिंह की ओर देखा। मुझे ऐसा लगा मानो आज़ाद बिलकुल बदल गया है। उसके चेहरे की जड़ता कुछ कम हो गई थी।

'मक्का जाने के पहले एक दफ़ा सुना दूँगा।' आज़ाद ने कहा।

'एक बार सुनने से मुझे सन्तोष न होगा।' समर ने कहा।

'आप कब मुझे रिहा करते हैं?' मैंने प्रसंग बदलकर पूछा।

'कल के बाद किसी भी दिन।'

'बहुत दिन हो गए।'

'मगर आप तो अपने काम पर ही लगे हुए थे। अब कल ठग संगठन का अन्तिम विसर्जन देखकर जाइए।'

इसके बाद गुप्त मार्ग से समरसिंह बाहर निकला। आज़ाद भी उसके पीछे-पीछे चला गया।

उनके जाने के बाद मेरी झपकी लग गई। खटका सुनकर जागा तो आँखों के समक्ष अपने अंगरक्षक दिलावर को खड़ा पाया।

'क्यों, तुम यहाँ कैसे ?' मैंने उठते हुए पूछा।

'मैं यहीं हूँ। बराबर आपकी हाजिरी में रहता और पहरा देता रहता हूँ।'

'क्या मेरी रक्षा की इतनी आवश्यकता है ?'

'मुझे हुक्म है। आज से नहीं, बहुत दिनों से; इसी लिए तो आपकी अर्दली में हूँ।'

'मुझे मालूम है। मगर अब क्या जरूरत है ?'

'जब तक आप यहाँ से चले न जायेंगे मैं पहरा देता रहूँगा।'

'अब तक तो तुम नजर आये नहीं थे।'

'अभी ही जरूरत हुई। आज़ाद इधर वापस आकर निकल गया है।'

'किधर गया है ?'

'शायद सुमरा के पीछे।'

'सुमरा कहाँ है ?'

'मैं भी यही जानना चाहता हूँ। क्या उन्होंने आपसे कुछ कहा है ?'

'नहीं।'

दिलावर चुपचाप खड़ा रहा, परन्तु उसके चेहरे पर व्यग्रता साफ दिखाई दे रही थी।

'हम दोनों उनके पीछे क्यों न चलें ?' मैंने पूछा।

'मैं अकेला नहीं जा सकता। हम दोनों जा सकते हैं, अगर आप चाहें।'

'क्या कोई भयानक बात होनेवाली है ?'

'कुछ कहा नहीं जा सकता। कल क्या होगा सो भवानी ही जानें।'

'क्या आज़ाद की ओर से कोई खतरा है ?'

'निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता। सुमरा के पीछे वह गया है, इसलिए डर मालूम पड़ता है।

'मगर वे दोनों तो दोस्त बन चुके हैं।'

'हाँ। फिर भी मुझे डर है। आज की रात का कोई भरोसा नहीं।'

'तो चलो, हम चलें।'

हम दोनो तैयार हुए। एक गुप्त द्वार से होकर मैं दिलावर के पीछे चला। झरने के किनारे के पत्थरों के ऊपर दो छायाएँ हिलती हुई नज़र आईं। हम अपनी छाया को बचाते हुए वहीं दुबककर बैठ गए।

मैंने सोचा था कि कोई भयानक घटना घटेगी। मगर उसके बदले वहाँ मुझे मानव-हृदय की एक महान और दिव्य कविता सुनने को मिली।

१७ : मानवी कविता

समरसिंह और आयशा बातचीत करके एक समस्या को सुलझा रहे थे।

'तुम्हें मालूम तो है न कि मैं हिन्दू हूँ?' समरसिंह ने कहा।

'इतने दिन साथ रहकर भी क्या तुम इस बात को भूल नहीं सके?' आयशा बोली।

'तुम्हें तुम्हारे निर्णय में मुझे सहायता पहुँचानी चाहिए। हिन्दू और मुसलमानों की छिन्न-भिन्न संस्कृतियाँ शायद जीवन में बाधा उपस्थित करें।'

'समुदाय के इस भूत को अगर तुम खड़ा ही करना चाहो तो बात दूसरी है। बाकी हकीकत यह है कि भारत के हिन्दू आधे मुसलमान हैं और मुसलमान आधे हिन्दू हैं। मुझे तो विरोध और बाधा का कोई डर नहीं है।'

'क्या तुम आज़ाद के साथ अन्याय नहीं कर रही हो?' थोड़ी देर के बाद समरसिंह ने कहा।

'तनिक भी नहीं।'

'अपने पिताजी और भाई की इच्छा का भी तो तुम्हें विचार करना चाहिए। आज़ाद ने तुम्हारे लिए जो कुछ किया है उसे याद करो।

अगर तुम मेरी सलाह मान लो तो हमारी संस्था जीवित रहेगी। नहीं मानती हो तो हम सब बिखर जायेंगे। आज की रात आखिरी रात है।'

'अब्बा तो छोड़कर चले गए। भाई की इच्छा का मैंने आज तक आदर किया है। भवानी को मेरा बलिदान देने को जब वह तैयार हुए तब भी मैंने अपना सिर झुका लिया। शरीर को मार सकती हूँ, लेकिन मन के ऊपर तो मेरा कोई बस नहीं है।'

'तुमने आज़ाद को ठीक से पहचाना नहीं है।'

'मैंने उसे पहचान लिया है। जैसे भी बने वह मुझे पाना चाहता है। लेकिन मुझे उस पर जरा भी यकीन नहीं। सारी बिरादरी उसकी कुचालों के कारण बिखरी जा रही है।'

'उसके-जैसा प्रेमी और कौन हो सकता है? तुम्हें प्रसन्न करने के लिए उसने जो-जो कार्य किये वे सब तुम्हें मालूम हैं। इतना अवश्य है कि मैंने उसके कई कार्यों को सफल नहीं होने दिया, क्योंकि मुझे कई कामों में धर्म का पतन होता दिखाई देता था। और आज जब वह फकीर बनना चाहता है तो....।'

'उसको फकीर हो जाने दो।'

'नहीं। तुम मुझे तो प्राप्त नहीं ही करोगी, आज़ाद को भी गँवा दोगी।'

'तुम तो मुझे मिल भी गए हो।'

'मेरे व्रत को याद करो।'

'कैसा ही व्रत क्यों न हो तुम तो मेरे हो ही।'

'मैं सारी दुनिया का बनना चाहता हूँ।'

'मुझे छोड़कर नहीं, मुझे साथ में रखकर।'

'आयशा, यह पागलपन कब तक चलेगा?'

'जब तक मैं जीवित हूँ।'

'ऋषि-मुनि भी स्खलित हो जाते हैं, तपश्चर्या खंडित हो जाती है। साथ रहेंगे तो देह देह को माँगेगी, शरीर शरीर के लिए लालायित होगा।'

'अगर कभी देह को देह देनी भी पड़ी तो वह तपश्चर्या का खंडन नहीं, उसका ऊर्ध्वीकरण होगा।'

कुछ रुककर समरसिंह के ये चौंकानेवाले वाक्य सुनाई दिये :

'हम बारह वर्ष तक अलग रहें। गोरे हमें जीत रहे हैं।, ये गोरे अगर भारतीय बन गए तो हम उनको गले लगायेंगे। अगर ये गोरे विजय और स्वामित्व के गर्व में हमें गुलाम बनाने की कोशिश करेंगे तो हम बिरादरी को फिर से संगठित करेंगे। गोरों की ठगी को रोकने और मिटाने के लिए इस बार हमें अपनी बिरादरी को दूसरे ढंग से तैयार करना होगा। हो सकता है कि इस प्रकार छिपकर काम करने का ढंग भी हमें छोड़ना पड़े।'

'उसके बाद ?' आयशा ने कहा।

'बारह वर्ष के तप के बाद हम फिर मिलेंगे; तब जैसा होगा सोचेंगे।'

'देखो समर, मैं तुम्हें मुक्त रखना चाहती हूँ। अगर मेरी उपस्थिति तुम्हें पसन्द न हो तो मैं इसी क्षण यहाँ से चली जाऊँगी।'

'आयशा, इस तरह रूठो मत।'

'मैं रूठती नहीं हूँ। तुम्हारा आदर्श बहुत ऊँचा है। मेरी उपस्थिति से तुम्हारे नीचे गिरने का डर है। तुम्हारी खातिर, तुम्हें सुखी देखने की खातिर मैं हमेशा के लिए तुम्हारे पास से चली जाना चाहती हूँ।'

'आयशा ! तुम मेरे हृदय से हट नहीं सकती।' कुछ रुक-रुककर समरसिंह बोला।

'तुम्हारी आँखों की ओट हो जाना क्या काफी न होगा।' हँसकर आयशा ने कहा।

'हृदय और आँख में अधिक दूरी नहीं है।' कुछ सोचते हुए समरसिंह ने कहा।

'हम दोनों को दूर कर देंगे।'

'कैसे ?'

'मेरी एक अन्तिम माँग स्वीकार करो। फिर कभी तुम्हारे जीवनपथ में दिखाई न दूँगी।'

मैं चौंका। दिलावर भी मानो कुछ चौंका। आजीवन प्रेम का वरण करनेवाले युगल किसी आदर्श के हेतु अलग होते समय क्या माँग सकते हैं? आखिरी चुम्बन? आखिरी आलिंगन? अन्तिम बार प्रेम की परितृप्ति?

समरसिंह कुछ क्षणों के लिए चुप रहा; यह देख आयशा ने पूछा—क्यों, किस सोच में पड़ गए?

'तुमसे डर लगता है, सुन्दरी हो फिर भी।'

'क्या मैं सच ही सुन्दर हूँ?'

'सौन्दर्य की प्रतिमा ही हो।'

'हम मुसलमान तो प्रतिमा की पूजा करते नहीं हैं। आज मैं मूर्ति-भंजक बनती हूँ...देखो टूटती है यह प्रतिमा।' आयशा बोली।

सहसा उस गढ़िम उजाले में बिजली की चमक की तरह कटार का फलक चमका। मगर दूसरे ही क्षण वह खनखनाती हुई दूर के पत्थर पर जा गिरी।

'आयशा, कैसी बेवकूफी कर रही हो? क्या इस तरह मैं तुम्हें मरने दूँगा?' समरसिंह ने कहा।

आयशा ठहाके के साथ हँस पड़ी। वह आत्महत्या करना चाहती थी।

'प्रतिमा को तोड़ना हो, तो क्या करना चाहिए? यह तो केवल एक प्रयोग था।' हँसते-हँसते आयशा ने कहा।

'अब किसी तरह का कोई प्रयोग मत करना।'

'मगर मेरी माँग?'

'तुम्हारी सभी माँगों को मैं स्वीकार करता हूँ। माँग लो, जो भी माँगना चाहो।' समरसिंह ने कहा।

मुझे लगा कि दोनो प्रेमी एक-दूसरे के समीप आयेंगे। समरसिंह अपने ब्रह्मचर्य का परित्यागकर ठग-जीवन में खेले गए अनेक खेलों में एक अतीव सुन्दर मानव-खेल की वृद्धि करेगा। हो सकता है कि दोनो पति-पत्नी बन जायें। मगर आयशा की माँग बड़ी विचित्र थी।

'देखो, ये दो गिलास मैं लायी हूँ। दोनो शरबत से भरे हैं। एक

समर के हाथ का प्याला पत्थर पर गिरकर चकनाचूर हो गया।

गिलास से तुम मुझे शरबत पिलाओ, दूसरे से मैं तुम्हें। बस, इससे अधिक कुछ नहीं चाहती। इसमें तो कोई डर की बात नहीं है न ?' आयशा बोली।

'बिलकुल नहीं।'

'तुम्हारा हिन्दुत्व तो नहीं मिट जायेगा ?'

'मैं ऐसा हिन्दू नहीं हूँ, कि मुसलमान के हाथ का पानी पीने से भ्रष्ट हो जाऊँ।'

'तो थामो यह गिलास अपने हाथ में। मैं यह दूसरा गिलास अपने हाथ में लेती हूँ। पहले मैं तुम्हें पिलाऊँगी फिर तुम मुझे पिलाना।'

'हम अपने-अपने हाथों के गिलास से ही क्यों न पीयें ?'

'बिलकुल नहीं। मेरे कहने के मुताबिक करो।'

'अपने हाथ का गिलास मैं खुद ही पी जाता....'

'अरे....अरे....नहीं !' आयशा चीख उठी और समर के हाथ का काँच का गिलास पत्थर पर गिरकर टूट गया।

'आओ, अब हम दोनों एक ही गिलास में से शरबत पीयें।' समरसिंह की हँसती हुई आवाज़ सुनाई दी।

'तुमने यह क्या किया ? मेरी सारी बाजी ही उलट दी।'

'कटार से नहीं मरने दिया तो जहर से मरने की कोशिश की और सो भी मेरे हाथ से !'

'मौत भी मैं प्रेमी के हाथ से चाहती हूँ।'

सहसा सितार के तारों की झंकार सुनाई दी। मानव-हृदय के भाव सूक्ष्म होते हैं और सारी मानव-जाति को वे एकता के सूत्र में आबद्ध कर देते हैं। ऐसा ही कोई भाव सुरों में आकार ग्रहण कर रहा था। मैं और दिलावर तो मौन थे ही, मृत्यु की गहराई और प्रेम की चोटियों के बीच झूलते हुए समरसिंह और आयशा भी चुप बैठे थे।

सुरों का यह जादू कब तक चलता रहा मालूम नहीं।

'आज़ाद, मेरी एक माँग मंजूर करोगे ?' हठात् समरसिंह ने उच्च स्वर में कहा।

'क्या ?' बीन बजाते हुए आज़ाद ने पूछा।

'मेरी चिता प्रज्वलित होकर ठंडी होने तक बीन बजाने का वचन दो। कैसी अद्भुत कला है यह !'

आज़ाद हमारी ही तरह पहाड़ी के कोने में बैठकर समरसिंह और आयशा की बातचीत सुन रहा था।

'तुम दोनों को जन्नत मिले। चिता या कब्र तुम्हारे लिए नहीं है।' आज़ाद ने कहा।

अब मैं भी उठ खड़ा हुआ। प्रभात की धुँधली रोशनी में समर ने मुझे पहिचाना और कहा—साहब, आप कैसे ?

'मैं दिलावर के साथ तुम्हें ढूँढ़ने को आया था।'

'मुझे ? मैं सलामत हूँ—आयशा और आज़ाद के साथ।'

सूर्योदय होने तक हम सब उसी पहाड़ी पर साथ-साथ बैठे रहे।

१८ : ठग और मानवता

दिलावर के मुख को शोकाच्छन्न देख मैंने उससे पूछा—क्यों दिलावर, तुम तो मेरे साथ ही हो न ?

'जी नहीं, अब आपको मेरी ज़रूरत नहीं रही।'

'आज़ाद कहाँ है ?'

'वह तो चल पड़े अपनी बीन लेकर।'

'और समरसिंह ?'

'मटिल्डा को समझा रहे हैं।'

'उसे क्या समझाना है ?

'वह आपके साथ चलने से इनकार करती है। समर उसे समझा-बुझाकर राज़ी कर रहे हैं।'

'वह इनकार क्यों करती है ?'

'उसे यहाँ रहना पसन्द है। समरसिंह के पास वह रहना चाहती है।'

'मैं समरसिंह से मिलना चाहता हूँ।'

हठात् दरवाजा खुला और भीतर से समरसिंह तथा मटिल्डा, दोनो मेरे पास आये। मटिल्डा की आँखों में आँसू थे।

'साहब, अब आप जहाँ जी चाहे जा सकते हैं। आज से ठगों का उपद्रव बन्द होता है।' समरसिंह ने कहा।

'अगर हुआ, तो ?' मैंने पूछा।

'तो आपको मान लेना होगा कि उसे हमारा समर्थन नहीं है। आप हमारी निन्दा न करते रहें इसी लिए जाते-जाते भी हमने अपना सच्चा स्वरूप आपको दिखलाया है।'

'अब हम कब मिलेंगे ? दिलावर खेती करेगा। आजाद फकीर होकर जा रहे हैं। आप क्या बनेंगे ?' मैंने पूछा।

'मैं तो जो हूँ वही रहूँगा।'

'क्या मतलब ?'

'बचपन से गेरुआ पहना है। वह कभी-कभी बदल जाता था। अब हमेशा के लिए पहने रहूँगा।'

'और आयशा ?'

'वह भी मेरे साथ रहेगी, जोगन बनकर।'

मैं स्तब्ध रह गया। भयानक गुनहगार समझे जानेवाले वर्ग में भी कला, मानवता और वैराग्य प्रस्फुटित होते हैं !

'इस मटिल्डा की चिन्ता थी। यह मेरे साथ रहना चाहती थी। बड़ी मुश्किल से लौटने को राजी हुई है। आप इसे अपने साथ ले जाइए और इसके मा-बाप को सौंप दीजिए।' समरसिंह ने कहा।

'मैं अभी यहीं रहना चाहती हूँ।' मटिल्डा बोल उठी।

'आप तो हमें यहाँ से भगा दे रहे हैं।' मैंने अपने हृदय के सच्चे भावों को व्यक्त किया।

'आइए साहब ! मैं आपको अपनी भवानी के अन्तिम दर्शन करा लाऊँ।' समरसिंह ने कहा और मुझे ले चला।

इसी भव्य और भयानक मन्दिर में हम कई गुप्त मार्गों और द्वारों

से होते हुए पहुँचे। महाविकराल भवानी की मूर्ति मन्दिर की भयानकता को और भी बढ़ा रही थी। समरसिंह उस मूर्ति की ओर बड़ी देर तक देखता रहा; फिर उसने देवी के आगे सिर नवाया।

'क्या आप सचमुच इस भयानक मूर्ति को मानते हैं ?' मैंने पूछा।

'जब तक दुनिया में भयानकता रहेगी ऐसी भयानक मूर्तियाँ भी बनती रहेंगी।'

'मगर आप तो इसकी पूजा करते हैं।'

'जगत् में अगर भयानकता है और उसकी मूर्ति बनाई जाती है तो उसकी पूजा क्यों नहीं होगी ?'

'अब इस मूर्ति की पूजा कौन करेगा ?'

'इस मूर्ति को कई बलिदान दिये गए। इस मूर्ति ने सैकड़ों वर्षों तक हम हिन्दू और मुसलमानों के बीच एकता को बनाये रखा। लेकिन आज वह बात नहीं रह गई।' समरसिंह ने कहा।

'क्यों ? क्या मूर्ति में से देवी को उठा लिया है ?' मैंने परिहास किया।

'आइए ! मैं मूर्ति के समीप ले चलकर आपको सारा रहस्य समझाता हूँ।' मेरा हाथ पकड़कर समरसिंह मुझे मूर्ति के समीप ले गया। जितना ही पास जाता था मूर्ति की भयानकता बढ़ती जाती थी। समरसिंह मेरा हाथ पकड़े हुए था, सो अच्छा ही हुआ।

'स्लीमान साहब ! आप गौर से हमारी देवी की मूर्ति को देखिए। इस मूर्ति ने अच्छे-अच्छे शूरवीरों को भी भयभीत कर दिया है।'

मैं देख रहा था। थोड़ी देर तक देखता रहा। देवी की आँख, जिह्वा, शस्त्रास्त्र, आभूषण और डीलडौल—सभी कुछ भयप्रेरक था।

'इस मूर्ति का प्रत्येक अंग यंत्रचालित है। देवी खड्ग उठा सकती है, पैरों के नीचे मनुष्य को कुचल सकती है और अपने नाखून अपराधियों की देह में गड़ा भी सकती है।' विभिन्न कलों को दबाकर देवी मूर्ति को सजीव करते हुए समरसिंह ने कहा। देवी की इस यांत्रिक हलचल ने उसकी भयानकता में और भी वृद्धि कर दी थी। मैं घबरा उठा।

'बस, अब मुझे ऐसा क्रूर दृश्य मत दिखाइए।'

'अच्छी बात है। मगर क्या आपके दमन, आतंक और दुर्व्यवस्था से भी हमारी देवी अधिक क्रूर है?'

मैंने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया।

'याद रखिएगा की भविष्य में आपकी तोप-बन्दूकों की भयानकता हमारी देवी की भयानकता से बढ़ने न पाये।'

'यहाँ से मुझे भाग जाने की इच्छा हो रही है।'

'मैं आपको और गहराई में ले चलता हूँ।' इतना कहकर समरसिंह एक कदम आगे बढ़कर देवी के पास खड़ा हो गया। और देवी के हाथ में रखी हुई खोपड़ी का उसने स्पर्श किया।

सारी मूर्ति मानो सिकुड़ रही हो ऐसा मुझे भ्रम हुआ। उस मूर्ति के स्थान पर वहाँ एक अधखुला स्तम्भ दिखाई दिया।

'आइए साहब, मेरे पीछे!' कह हाथ पकड़कर उसने मुझे आगे ढकेला। अधखुले खम्भे में छोटी-छोटी सीढ़ियाँ थीं। उनसे उतरे तो चौक के बीच में एक छोटा-सा देवालय नजर आया। छोटे मगर सुन्दर मन्दिर में प्रवेश करने पर सामने मन्द-मन्द मुस्कराती सुन्दर स्फटिक-उज्ज्वल एक देवी मूर्ति दिखाई दी। इस मूर्ति में तनिक-सी भी भयानकता नहीं थी। मूर्ति के सामने देखते ही बनता था। कलाकार ने उसके निर्माण में अपनी सारी कला लगा दी थी।

'क्यों साहब, माता मरियम के ही समान लगती है न हमारी यह मूर्ति?'

मुझे स्वीकार करना पड़ा कि मेरी की तस्वीरों और मूर्तियों से इस देवी का सौन्दर्य तनिक भी घटकर नहीं।

'हम जो कुछ माँगते हैं, मा प्रसन्न होकर देती हैं।'

'अच्छा।'

'जी हाँ! देखिए, माता-द्वारा रक्षित इस खजाने को!' यह कहकर समरसिंह घुटनों के बल बैठ गया और उसने मूर्ति के पाँव को छुआ। पाँव को छूते ही दीवारें बिल्कुल हट गईं और सीखचोंवाले बड़े-बड़े कमरे दिखाई दिये।

'यह हमारा अक्षय भंडार है। माता की आज्ञा से ही खुल सकता है। इस खजाने से हम कई राज्यों और रियासतों को भी खरीद सकते हैं। और शस्त्रास्त्र तो इतने हैं कि अनेक राज्यों को पराजित किया जा सकता है।'

मैं इस दृश्य को देखता ही रह गया। समरसिंह बिलकुल सच कह रहा था।

'अब इसका क्या करेंगे?' मैंने पूछा।

'बन्द करके भूल जाऊँगा।'

मैं बहुत देर तक खजाने को देखता रहा। अन्त में समरसिंह ने कहा—अब मेरे और आपके बीच में परदा पड़ जायेगा। आप लोग बड़े जिज्ञासु होते हैं, इसी लिए मैंने यह खजाना आपको दिखाया।

'अभी तो बहुत-कुछ जानना शेष है।'

'यहाँ माताजी के समक्ष मैं जो बता सकूँगा वह बाहर नहीं बतला सकता। आप पूछिए।'

'आप कौन हैं?' मैंने पूछा।

'मैं समस्त ठग-संगठन का प्रमुख हूँ। प्रमुख कभी अपने अनुयायियों के सामने नहीं आता। लोग उसे उसकी परछाईं और नाम से ही जानते हैं।'

'आपको बाहर क्यों आना पड़ा?'

'अगर मैं बाहर न आता तो ठगों का महान् संगठन भ्रष्ट हो जाता।'

'वह कैसे?'

'आपस में कई मतभेद उठ खड़े हुए थे। औरतों के ठग बिरादरी में सम्मिलित होते ही उन पर भी पुरुषों के लिए बने नियम लागू करना चाहिए, ऐसा कहनेवाले कई लोग निकल आये। स्वयं खान साहब की भी यही राय थी। अकेला मैं उनसे सहमत नहीं हूँ। औरत के ठग बन जाने पर भी उसकी हत्या नहीं की जा सकती, यह ठग बिरादरी का पहला सिद्धान्त होना चाहिए।'

'मतभेद का कारण क्या था?'

'हमारी कामुकता। नारी महाकाली है, साथ ही वह महामाया भी है। आयशा को लेकर झगड़ा इतना तीव्र हो उठा कि ठग संगठन को ही बन्द करने की नौबत आ गई।'

'मगर आयशा ठगों में सम्मिलित कैसे हुई?'

उसने थोड़े में पूरी कहानी कह सुनाई। आयशा के पिता का ठग बिरादरी में प्रमुख के बाद दूसरा स्थान था। आयशा को उसके पिता ने बीन सिखाना शुरू किया। एक युवक बीनकार किसी रियासत में मिल गया। वही यह आजाद है। अपनी शक्ति और बुद्धि से वह आगे बढ़ता ही गया। उसे आयशा से प्रेम हो गया। मगर आयशा को वह जरा भी पसन्द न था। आयशा समर से शादी करना चाहती थी।

'तो आपने शादी क्यों न की? आपके हृदय में भी आयशा के प्रति कोमल भाव हैं।' मैंने पूछा।

'ठग बिरादरी के प्रमुख को बड़े-से-बड़ा त्याग करना पड़ता है। वह शादी नहीं कर सकता। उसको ब्रह्मचर्य-व्रत लेना पड़ता है।'

'मगर अब तो आप स्वतंत्र हैं। बिरादरी अब रही नहीं। आयशा को अपना क्यों नहीं लेते?'

'इन दोनो देवी मूर्तियों के समक्ष अध्यक्ष को प्रतिज्ञा लेनी होती है। अध्यक्ष ही दोनो मूर्तियों के रहस्य को जान सकता है। खान साहब केवल एक मूर्ति के रहस्य को जानते हैं, आजाद केवल दूसरी मूर्ति के रहस्य को। मैं जब से गुरु बना दोनो मूर्तियों के भेद को जानता हूँ और अकेला मैं ही जानता हूँ। पर संगठन भंग हुआ और देवी के आगे लिया हुआ मेरा व्रत व्यर्थ हो गया।'

'अब आप क्या करेंगे?'

'ईश्वर की अराधना। सत्, चित् और आनन्द के तादात्म्य की साधना। क्या कुछ और भी पूछना है?'

'आपके-जैसे ही मगर आपसे अधिक वृद्ध दिखाई देनेवाले वह साधु कौन थे?'

'मैं ही था। जिस तरह आजाद बीन बजाने में कुशल है, मैं भेष

बदलने में। चाहूँ तो ठीक आपकी तरह अपनी शकल बना सकता हूँ।'

'क्या हम कभी मिलेंगे ?'

'आप सज्जन हैं। ऐसा कीजिए कि सज्जनों की वृद्धि हो। मिलें या न मिलें, मगर इतना अवश्य याद रखें कि प्रजा को देवी मानकर उसकी पूजा करनी चाहिए। प्रजा को प्रसन्न रखने पर वह अन्नपूर्णा बनती और कुपित करने से चंडी और भवानी बनकर विध्वंस करने लगती है।'

थोड़ी देर बाद हम दूसरे रास्ते से वापस हुए।

मटिल्डा को साथ लेकर मुझे लौटना था। वह तो लौटने को राजी ही नहीं थी। स्वयं मेरा भी मन लौटने को नहीं हो रहा था।

आखिर हम लौटने को तैयार हुए। मटिल्डा पालकी में बैठी। अपने सभी परिचित ठगों से मैं मिला और पैदल ही चल पड़ा। समरसिंह और आयशा थोड़ी दूर तक मेरे साथ आये। मैं सोचता रहा, आयशा का भविष्य क्या होगा ?

उसने अपने भविष्य के बारे में एक निश्चय किया था। बिरादरी के टूटने के बजाय स्वयं अपनी कुरबानी देना उसने बेहतर समझा। अपने हाथ से कटार खाकर या प्रियतम के हाथ से जहर पीकर मरने को तैयार हुई। लेकिन समरसिंह के आगे उसकी एक न चली।

आखिर मुझसे रहा नहीं गया। पूछ ही बैठा—अब आयशा क्या करेगी ?

'जो समरसिंह करेंगे वही मैं भी करूँगी।' आयशा ने कहा।

'अगर वह तो जीवन-भर अविवाहित रहेंगे।'

"मैं भी वैसा ही करूँगी। जब वह शादी करेंगे तो उसी क्षण शादी कर लूँगी।' आयशा ने मुस्कराकर अपने गम्भीर निर्णय को व्यक्त किया।

'समरसिंह, हम आपके शेर को तो भूल ही गए ?'

'जी नहीं वह हमारे साथ ही है। राजुल, आओ, साहब से मिल लो।' समरसिंह ने कहा।

और न जाने कहाँ से वह विकराल शेर सामने आकर खड़ा हो गया।

'साहब ! मैंने दो बातें सीखी हैं : मनुष्य प्रेम से वश में होता है, यह आज़ाद ने सिखाया। और प्रेम से ही हिंसक प्राणी भी वश में हो सकता है और मित्र बन जाता है, यह राजुल ने सिखाया ! जब से यह बच्चा था तभी से मेरा मित्र है।'

अन्त में हम अलग हुए। जीवन के किसी अलौकिक स्वप्न से जागने पर जितना दुःख होता है उतने ही दुःख का मैंने अनुभव किया।

बाद में मैंने कई वक्तव्य दिये; बहुत-से लेख लिखे। ठग लोगों के संगठन के टूटने के बारे में भी लिखा। उनके पारस्परिक झगड़ों के कारण हमें अनायास विजय प्राप्त हुई, इसका भी दिग्दर्शन किया। परन्तु अपने सरकारी विवरणों और टिप्पणियों में मैंने जान-बूझकर बहुत-सी बातें छिपा लीं। दफ्तरी कागजों में मानव-मन और हृदय के कोमल भावों की अभिव्यक्ति की गुञ्जाइश ही कहाँ है और आवश्यकता भी क्या है ?

इसके बाद ठग लोगों के उपद्रव बिलकुल बन्द हो गए। लोग मुझे स्लीमान ठग कहते हैं। एक तरह से वे सत्य ही कहते हैं। अगर समरसिंह के साथ अधिक समय तक रहता तो निश्चय ही ठग बन जाता। उनके जीवन में मेरी दिलचस्पी और लगाव बढ़ते ही जाते थे।

सच्चा कौन है महाराज्य या महाहृदय ?

मार्ग में ही मैंने यह सारी घटना लिख डाली। ठगों के बारे में मैंने बहुत लिखा है। मगर वह सब सतही है। यह जो लिखा है सो ठग-संगठन को निकट से देख-समझकर और अनुभव करके लिखा है। इसमें मैंने ठग की आत्मा और हृदय का उद्घाटन किया है। ठगों से मैंने एक सत्य जाना है और वह यह है कि ठग संगठन में भी मानवता थी और अपने पूर्ण रूप में थी।

मुझे सच्चा मानव दो; मैं राज्य या राज्य-विस्तार नहीं चाहता !